ऐप्लीकेशन ऑफ वर्ण मेरु इन रेसोनेंस इनवाल्वड म्यूजिकल साइंस

[Application of Varna Meru in Resonance Involved Musical Science]

महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय
की
विद्यावारिधि (पी-एच.डी.) उपाधि हेतु
प्रस्तुत

शोध - प्रबंध

निर्देशक
डॉ. बी. के. सिन्हा
अध्यक्ष, भौतिक शास्त्र विभाग
रानी दुर्गावती शासकीय महाविद्यालय
मंडला (म. प्र.)

निर्देशक
प्रो. एम. के. दवे
भूतपूर्व अध्यक्ष, रसायन शास्त्र विभाग
शासकीय विज्ञान महाविद्यालय
जबलपुर (म.प्र.)

अनुसन्धायक
सुशांत बोस
शोधच्छात्र
महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय
परिसर, जबलपुर (म.प्र.)

फरवरी - 2002

मूल्यांकन हेतु अग्रसारित

मुनमेश शर्मा

सङ्काय प्रमुख / विभागाध्यक्ष
महर्षि वेद विज्ञान सङ्काय:
महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय:
जबलपुरम् – म.प्र.

यह पुस्तक देय नहीं है।

सन्दर्भ पुस्तक

ऐप्लीकेशन ऑफ वर्ण मेरु इन रेसोनेंस इनवाल्वड म्यूजिकल साइंस

[Application of Varna Meru in Resonance Involved Musical Science]

महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय
की
विद्यावारिधि (पी–एच.डी.) उपाधि हेतु
प्रस्तुत

शोध - प्रबंध

निर्देशक
डॉ. बी. के. सिन्हा
अध्यक्ष, भौतिक शास्त्र विभाग
रानी दुर्गावती शासकीय महाविद्यालय
मंडला (म. प्र.)

निर्देशक
प्रो. एम. के. दवे
भूतपूर्व अध्यक्ष, रसायन शास्त्र विभाग
शासकीय विज्ञान महाविद्यालय
जबलपुर (म.प्र.)

अनुसन्धायक
सुशांत बोस
शोधच्छात्र
महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय
परिसर, जबलपुर (म.प्र.)

फरवरी - 2002

//प्रमाण–पत्र//

प्रमाणित किया जाता है कि श्री सुशांत बोस, एम.एससी. (भौतिक शास्त्र) ने मेरे निर्देशन में **ऐप्लीकेशन ऑफ वर्ण मेरू इन रेसोनेंस इनवाल्वड म्युजिकल साइंस** [Application of Varna Meru in Resonance Involved Musical Science] विषय पर **विद्यावारिधि (पी.–एच.डी)** की उपाधि हेतु कार्य किया। आपका कार्य अन्तर्विभागीय **(Interdisciplinary)** है, जिसमें भौतिक विज्ञान एवं वैदिक विज्ञान दोनों का समन्वय है। यह कार्य मौलिक है, एवं मुख्यतः प्राथमिक जानकारी एवं स्व–एकत्रित सांख्यिकी पर आधारित है।

(डॉ. बी. के. सिन्हा)
अध्यक्ष, भौतिक शास्त्र विभाग
रानी दुर्गावती शासकीय महाविद्यालय
मण्डला, (म.प्र.)

(प्रो. एम. के. दवे)
भूतपूर्व अध्यक्ष, रसायन शास्त्र विभाग
शासकीय विज्ञान महाविद्यालय
जबलपुर, (म.प्र.)

/ /आभार/ /

सर्वप्रथम मैं वीणा वादिनि, विद्या–बुद्धि प्रदायनी माँ सरस्वती के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनके चरण कमलों की महती कृपा से मैं इस शोध ग्रंथ को लिख सकने में समर्थ हो सका।

श्रद्धेय **प्रो. एम. के. दवे** अवकाश प्राप्त आचार्य, पूर्व अध्यक्ष रसायन शास्त्र विभाग, शासकीय विज्ञान महाविद्यालय जबलपुर, जिनकी गणना जाने माने वैदिक विज्ञानिकों के रूप में की जाती है, के प्रति में अपना आभार व्यक्त करता हूँ उन्होनें मुझे अपने मार्ग दर्शन में शोध कार्य करने की स्वीकृति प्रदान की पठन–पाठन संबंधी अत्यधिक व्यवस्था के बावजूद उन्होंने जिस प्रकार से अपना बहुमूल्य समय, इस शोध कार्य के निर्देशन में मुझे प्रदान किया वह शोध कार्य के प्रति उनकी प्रतिबद्धता तथा शोधार्थी के प्रति उनके असीम स्नेह की द्योतक है। उनके सुयोग्य मार्गदर्शन सतत् सहयोग तथा आत्मीय उत्साहवर्धन के परिणाम स्वरूप ही यह गुरूत्तर कार्य पूर्ण हो सका है। मैं **प्रोफेसर श्रीमती अरूणा दवे** अधिष्ठाता एवं अध्यक्ष गृह विज्ञान विभाग, शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान महिला महाविद्यालय, जबलपुर के प्रति भी अत्याधिक कृतज्ञ हूँ जिसका स्नेहिल व मधुर व्यवहार मुझे सदैव प्राप्त हुआ।

मैं अपनी कृतज्ञता, डॉ. वी. के. सिन्हा, प्राध्यापक भौतिक शास्त्र एवं अध्यक्ष भौतिक शास्त्र विभाग, रानी दुर्गावती महाविद्यालय, मंडला के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होनें इस कार्य में अत्यधिक रूचि लेते हुए समय–समय पर विषय वस्तु से संबंधित सार्थक चर्चा करते हुए बहुमूल्य मार्ग दर्शन प्रदान किया। वह मेरे गुरू भी रहे तथा उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञान से ही मैं इस योग्य बन सका, कि इस प्रकार के महत्वपूर्ण शोध कार्य को पूर्ण कर सका। मैं श्रीमती सिन्हा के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ जिनका मधुर व्यवहार मुझे हमेशा प्राप्त हुआ।

मैं **डॉ. भुवनेश्वर शर्मा** (कुलपति) महर्षि महेश योगी विश्वविद्यालय जबलपुर, **डॉ. राजेन्द्र चन्द्र सूँठा** (सिद्धि शिक्षक) महर्षि महेश योगी विश्वविद्यालय

जबलपुर, के प्रति भी अपना आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके द्वारा मुझे शोध कार्य की प्राथमिक शिक्षा प्राप्त हुई।

मैं डॉ. आनन्द जोशी (प्राचार्य भातखंडे संगीत महाविद्यालय, जबलपुर) श्री चन्द्रशेखर सेनगुप्ता (संगीत प्राध्यापक) डॉ. रीना महोबिया (संगीत प्राध्यापक) प्रोफेसर प्रशांत पाराशर (अध्यक्ष कम्प्यूटर विभाग, हितकारिणी कॉलेज, जबलपुर) डॉ. सलीम खान (सहायक प्राध्यापक, भौतिक शास्त्र) श्री विवेक नायडू, श्री शंकर बोस (तबला बादक) श्री संजय डेनियल (डायरेक्टर ऑफ रितिका ऑडियो स्टूडियो, जिनके द्वारा सिन्थेसाईजर पर मुझे आधुनिक तकनीक की जानकारी और गीत के ग्राफों के अध्ययन में उत्कृष्ट सहयोग एवं मार्गदर्शन प्राप्त हुआ), श्री मृदुल घोष (संगीत विद्यार्थी) के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ जिनके सहयोग से मुझे शोध संबंधी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुआ।

मैं अपने श्रद्धेय माता एवं पूज्य पिताजी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ, जिनकी शतत् मार्गदर्शन ने मुझे इस कार्य को प्रारंभ करने हेतु प्रेरित किया तथा उनके आर्शीवाद की छत्र छाया सदैव मेरे साथ रही।

मैं अपने परिवार के सदस्य जीजाश्री डॉ. कार्तिक घोष (सहायक प्राध्यापक) वनस्पति शास्त्र विभाग, रानी दुर्गावती महाविद्यालय मण्डला, मेरी बहन श्रीमती मंजूश्री घोष, श्रीमती गीता घोष, भ्राताश्री श्री जयदेव बोस, श्री प्रशांत बोस एवं भाभीश्री श्रीमती झूमा बोस के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मुझे समय–समय पर मार्गदर्शन दिया। इस हेतु मैं उनका सदैव आभारी रहूंगा।

मैं इस शोध कार्य में टंकण कार्य हेतु **बोस डी. टी. पी. सेन्टर, 582, गुप्तेश्वर, जबलपुर** का भी बहुत आभारी हूँ जिनके सहयोग से यह शोध कार्य पूर्ण हो सका।

(सुशान्त बोस)

अनुक्रमणिका

******

शोध प्रबंध के उद्देश्य की रूप रेखा

आज यह धारणा है कि संगीत एक कला मात्र ही है, जो किसी गुरु के चरणों में सीखने से ही प्राप्त हो सकती है। संगीत में किसी भी एक वाद्य यंत्र को बजाकर उसके सुरों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है तथा उसे निखारने के लिए गुरु का एक महत्वपूर्ण योगदान होता है।

संगीत शास्त्र के तकनीकि ज्ञान को पढ़ने पर यह ज्ञात होता है कि सरगम में खंड मेरु[1] का उपयोग किया जाता है, जिसमें स्वर के विभिन्न क्रमचय संचय बनाये जा सकते हैं इसमें वर्ण मेरु[1] का उल्लेख कम ही मिलता है।

मेरा यह प्रयास है कि यह सिद्ध किया जा सके कि संगीत का आधार वर्णमेरु अर्थात् द्विपद प्रमेय, क्रमचय संचय तथा अंक वृत्त का महत्त्व है अर्थात् संगीत को इसके रूप में स्पष्ट करने का लक्ष्य है कि संगीत मात्र कला की परिभाषा ही नहीं है बल्कि संगीत में सुनियोजित गणितीय विज्ञान के आधार पर रचे गये काल खंड, लय, ताल तथा स्वर का संचरण एक निश्चित नियम रूप में किया जाता है।

आधुनिक संगीत की पुस्तकों में इस तथ्य पर बहुत कम ही प्रकाश डाला जाता है, जो संगीत में उच्च स्तर पर पहुंच जाते हैं उन्हें यह जानना जरूरी है कि प्रकृति के गणितीय सिद्धांत जो वर्णमेरु में निहित है, उसी आधार का पूर्ण रूप संगीत में कला के रूप में प्रस्तुत होता है।

संगीत में वाद्य यंत्रों के उपयोग में खाली स्वरों में मध्य स्थानों को जब

लयबद्ध किया जाता है तब तरंगों से इसे सुसज्जित कर अत्यधिक मोहक बनाया जा सकता है। इस प्रक्रिया में काल माप ताल के आधार पर किया जाता है, वह भी प्रकृति के तुल्य नियमन करता है।

मेरे इस शोध कार्य में सर्वप्रथम आधुनिक ध्वनि की परिभाषाओं तथा पुरातन संगीत में प्रयुक्त परिभाषाओं का समायोजन करना प्रदर्शित है। मेरा प्रयास है कि ध्वनि के विभिन्न पहलुओं को सुगम तरीके से वैज्ञानिक ध्वनि के गुणों की विवेचना करना है।

इस तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर आधुनिक उपकरण सिन्थेसाईजर के माध्यम से संगीत के चारों मूल तत्वों का समाधान करने का प्रयास है।

आज के उपकरणों के उपयोग में व्यवसायीकरण होने के कारण मैं संगीत की धुन का एक अंश मात्र से इस सार तत्व अर्थात् प्रकृति के गणित का दर्शन करने की आशा लेकर यह शोध प्रस्तुत कर रहा हूँ। इसमें कोई भी संगीतज्ञ पूर्ण संगीत को ताल, लय, स्वर, अलंकार आदि का समावेश कर आनंद की अनुभूति कर सकता है। इस लघु शोध प्रयास में आधुनिक तकनीक की सहायता से भूले बिसरे शास्त्रीय संगीत की महत्ता को जनमानस को समझा सके। यह इसलिये आवश्यक है क्योंकि मानव के स्वास्थ्य पर वातावरण के साथ मंत्र, भजन, राग आदि का सुनिश्चित प्रभाव होता है।

महर्षि महेश योगी जी ने भावातीत सत्ता में जो सूक्ष्म कंपन अर्थात् तरंगों का स्वरूप दिखाया है वह चेतना के मूल हैं। इसी प्रकार जब व्यक्ति की चेतना स्वयं अपना अनुभव करती है तब उसमें कंपन आरंभ होता है वह कंपन स्वर के रूप में प्रगट होकर प्रकृति के नियमों को तरंगित करता है। इसे वैज्ञानिक तथा कला के रूप से परिष्कृत किया जा सके यही इस शोध कार्य का सार है।

******

ऐप्लीकेशन ऑफ वर्ण मेरु इन रेसोनेंस इनवाल्वड म्यूजिकल साइंस

[Application of Varna Meru in Resonance Involved Musical Science]

भूमिका :–

1. वैदिक काल की गणना :–

2000 वर्ष पूर्व में जब सनातन धर्म विभिन्न धर्मों में विभाजित हुआ है। आधुनिक इतिहास इसे सिर्फ 5000 वर्ष (महाभारत काल के बाद) की चर्चा करता है। यह इतिहास मानव को भ्रमित करता है। वास्तव में मानव का इतिहास 2 लाख वर्ष पूर्व से प्रारम्भ होता है; जब मानव की उत्पत्ति एक अफ्रिका की महिला से हुई [2] लेकिन वैज्ञानिकों के मत के अनुसार शायद कई जगह मानव की उत्पत्ति इसी काल में हुई होगी [2]।

गर्ग संहिता के अध्याय 61 में स्पष्ट लिखा है कि मानव कलियुग 10,000 वर्ष का है; जो ब्रह्माण्डीय युगों से भिन्न है। इस मानव युग की गणना निम्नानुसार है [2]।

सत्युग	35,000	वर्ष से 25,000 वर्ष पूर्व
त्रेता युग	25,000	वर्ष से 15,000 वर्ष पूर्व
द्वापर युग	15,000	वर्ष से 5,000 वर्ष पूर्व

What Await man in 2000 AD and there after M. K. Dave Ajanta Pub. D.K. Pub. Distributors New Delhi 1998.

Arya Bhatta - By Arya Bhatta Ed. by V. Sharma K. Sharma, Indian National Science Academy New Delhi

ऐप्लीकेशन ऑफ वर्ण मेरु इन रेसोनेंस इनवाल्वड म्यूजिकल साइंस

[Application of Varna Meru in Resonance Involved Musical Science]

भूमिका :–

1. वैदिक काल की गणना :–

2000 वर्ष पूर्व में जब सनातन धर्म विभिन्न धर्मों में विभाजित हुआ है। आधुनिक इतिहास इसे सिर्फ 5000 वर्ष (महाभारत काल के बाद) की चर्चा करता है। यह इतिहास मानव को भ्रमित करता है। वास्तव में मानव का इतिहास 2 लाख वर्ष पूर्व से प्रारंभ होता है; जब मानव की उत्पत्ति एक अफ्रिका की महिला से हुई [2] लेकिन वैज्ञानिकों के मत के अनुसार शायद कई जगह मानव की उत्पत्ति इसी काल में हुई होगी [2]।

गर्ग संहिता के अध्याय 61 में स्पष्ट लिखा है कि मानव कलियुग 10,000 वर्ष का है; जो ब्रह्माण्डीय युगों से भिन्न है। इस मानव युग की गणना निम्नानुसार है [2]।

सत्युग	35,000	वर्ष से 25,000 वर्ष पूर्व
त्रेता युग	25,000	वर्ष से 15,000 वर्ष पूर्व
द्वापर युग	15,000	वर्ष से 5,000 वर्ष पूर्व

What Await man in 2000 AD and there after M. K. Dave Ajanta Pub. D.K. Pub. Distributors New Delhi. 1998.

Arya Bhatta - By Arya Bhatta Ed. by V. Sharma K. Sharma, Indian National Science Academy. New Delhi

1. कलियुग :–

यह युग शुक्रवार 18 अगस्त 3102 ईसा [3] पूर्व अर्थात् 5012 वर्ष पूर्व से शुरू हुआ । अतः मानव युग 10,000 के चक्र का माना जा सकता है, जैसा कि गर्ग संहिता में[4] दिया गया है।

इसको सिद्ध करने हेतु निम्न चक्रीय तथ्य[5] अथवा प्रमाण प्रस्तुत किया जा चुका है।

अ. लघु वर्फ का चक्र (नाभकीय शीत)[5]।

ब. लघु पाषाण युग[6]।

स. 10,000 के चक्रानुसार शेल चित्र । 30,000, 20,000, 10,000 वर्ष[7]।

द. मानव कंकाल के अवशेष [5]।

इस चक्रों का अध्ययन (Palaeography) पीलीओग्राफी (प्राचीन शिलालेख का अध्ययन) (पुरातत्व) (Archaeology), जियॉलाजी (Geology) तथा अनेक विषयों के आधार पर जो तथ्य सामने आये है; जिसे समय के क्रमवार में रखने पर प्रमाणित होते है; जो उपर्युक्त मे दिया गया है।

श्री ऐ. सी. दास [7] ने भी वैदिक काल को 35,000 वर्ष पूर्व का सिद्ध किया है। अतः संस्कृत भाषा, वेद एवं वैदिक साहित्य 35,000 वर्ष से पूर्व माना जा सकता है। इसी मानव सतयुग के पूर्व ही एकीकृत ज्ञान वेदों में लिखा हुआ है। सभी धर्म (Religious) वैदिक सनातन धर्म पर ही आधारित हैं। वे सब देह में स्थित आत्मा को मानते है; स्वर्ग तथा पृथ्वी

A. C. Das Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute Pune Vol XXXIII 1952

को भी मान्यता देते हैं। मात्रा रीति रिवाज में थोड़ा सा परिवर्तन कर देने से कोई अन्तर नहीं पड़ता ।

2. **महर्षि महेश योगी के भावातीत ध्यान योग की महत्ता :–**

परम पूज्य महर्षि महेश योगी जी श्रद्धा के पात्र है। उन्होनें ध्यान योग की महत्ता को प्रदर्शित कर वैज्ञानिकों को एक नया आयाम दिया; जो श्रीमद् भगवत गीता तथा अन्य ग्रंथों में परमात्मा के रूप में व्यक्त किया गया है। उनके ज्ञान की प्रगाढता उनके द्वारा अनुवादित गीता में परिलक्षित होती है [8]।

ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने वेदान्तानुसार मानव की स्वयं की आत्मा को पहचानने तथा जानने का मार्ग बताया है। परमेश्वर चेतन अवस्था के द्वारा आत्मा का साक्षात्कार ध्यान योग द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

ध्यान योग की अवस्था में जिस आत्मा जो क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ दोनों हैं, जिसके कारण स्वयं का साक्षात्कार होता हैं; इसलिए वह स्वतः को ही जानती है। अपने में पूर्ण रूपेण सजग, अपने में लीन होते हुये भी स्वतः पूर्ण कार्य करने की क्षमता रखती है। आत्मा अनन्त ज्ञान का भंडार है; जो आनन्दमयी है। वह भूत, वर्तमान तथा भविष्य को जान कर भी प्रत्यक्ष नहीं होती। वह अनादि, अनन्त एवं अमृत है। वह कुछ न करते हुये भी सभी क्रियाओं के संचालन का निरीक्षण करती रहती है किन्तु उसे देख पाना असंभव है। मात्र उसका साक्षात्कार ही विचार और कार्य को प्रकृति के नियम के अनुसार जागृत कर सकता है। यही वैदिक ज्ञान–विज्ञान का आधार है।

श्रद्धेय महर्षि जी ने ध्यान योग की अवस्था में वैज्ञानिकों को लीन कराकर आचम्भित कर दिया; और उनके हृदय की गति मस्तिष्क की तरंगों की प्रतिक्रियाओं से

संबंध करने हेतु विवश कर दिया; जो प्राकृतिक नियमों पर आधारित होकर उन्हें एकत्व की ओर ले जाता हैं।

इस ध्यान योग की अवस्था में मन अनन्त विस्तारित हो जाता है किन्तु शरीर प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुये निम्न क्रिया किन्तु मन शान्त (अनन्त विस्तारित) हो जाता है इस अवस्था में चैतन्य, आत्मा से संयोग करता है।

महर्षि जी की प्रेरणा से आज ज्ञान–विज्ञानपरक अनुशीलन अत्यन्त प्रासङ्गिक है।

3. चेतना तथा आधुनिक विज्ञान :–

स्वतः संचालित चेतना एक ऐसी एकीकृत[8] स्थिति है; जिसमें चेतना अनन्त काल तक स्वतः के गुणों की अखंडता बनाये रखती है तथा वातावरण से प्रभावित नहीं होती है। यह एक एकीकृत अवस्था में स्वतः का पोषण करते हुये प्राकृतिक नियमों के आधार पर गुणात्मकता बढ़ाने की क्षमता रखती है।

क्वान्टम मेकेनिक्स[9] में प्रत्येक तंत्र कण–तरंग के गुणों द्वारा नियमित होती है। फलस्वरूप प्रत्येक तंत्र में उत्तेजित अवस्था क्रमबद्ध होती है। कुछ तंत्र एक अवस्था में उत्तेजित अवस्था में होते हैं और कुछ उनसे कम उत्तेजित अवस्था में होते हैं। सबसे कम उत्तेजित अवस्था को उस तंत्र की निम्नतर ऊर्जा अवस्था कहते हैं; जो प्रत्येक तंत्र में महत्वपूर्ण होती है।

क्वान्टम क्षेत्र में स्पंदन की ऐसी अनेक अवस्थाऐं होती हैं; इस क्षेत्र की अवस्था में जब कोई भी निम्नतर ऊर्जा वाले कण नहीं होते है; तब इस क्षेत्र की अवस्था को

क्षेत्र के निर्वात अवस्था कहा जाता है [9]। इस अवस्था में कोई भी कण उपस्थित नहीं रहता। तब भी वह जगह खाली नहीं रहती; इसके अंदर भौतिकी निर्वात स्थिति होते हुये भी इसमें वास्तविक कण परिपूर्ण होते हैं। ये कण वास्तविक के प्रतिरूप होते हैं तथा इस क्षेत्र की अवस्था को निम्नतर उत्तेजित अवस्था कहते हैं।

सभी अलग–अलग बलों और द्रव्य का क्षेत्र एकीकृत किया जाता है; जो निम्न चित्र में दर्शाया गया है [9]।

चित्र–1

(महर्षि टेक्नेलॉजी)

Experience of the Unified Field of Natural Law through the Maharishi Technology of the Unified Field

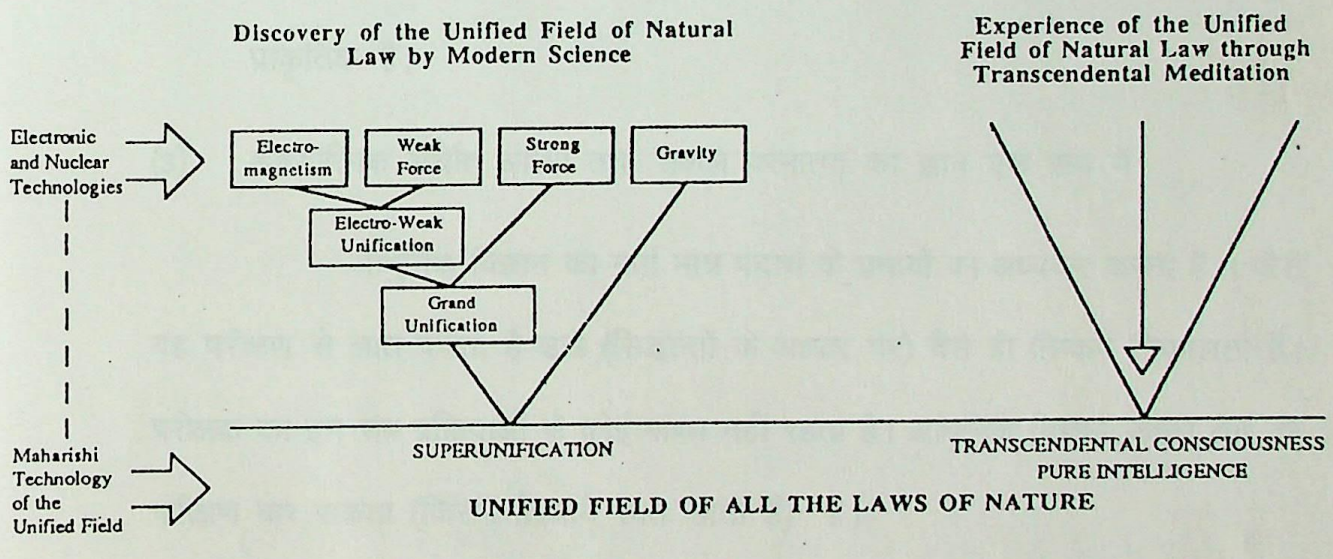

Figure 1. Recently modern physics has glimpsed the unified field of all the laws of nature, the unified state of all the force and matter fields found in nature. According to Maharishi (1986) the unified field of natural law is identical to the state of transcendental consciousness, which the individual experiences during the practice of the Maharishi Technology of the Unified Field.

इस स्थिति में (निर्वात में) अनन्त एवं अपरिबद्ध गुण होते हैं।

भावातीत ध्यान योग में शुद्ध चेतना की अत्यधिक शांति की अनुभूति होती है; ऐसी अवस्था में मन स्थिर हो जाता है। मस्तिष्क की तरंग तीव्र हो जाती है; जो निर्वात के समतुल्य है। अतः निर्वात की अवस्था एक ऐसी जीवंत स्थिति है; जिसमें सृष्टि और संहार निरन्तर चलता रहता है। भावातीत ध्यान योग में मन को संतुलित करने से, जो सूक्ष्म अवस्था प्राप्त होती है; उसे शांति की अवस्था कहते हैं। यह एक ऐसी शांति की अवस्था है जिसमें आसपास होने वाली ध्वनि, बातचीत तथा शोरगुल होते हुये भी सुनाई नहीं देता है।

वेदों में क्षेत्र के तीन विभाग हैं; जो सत्य का ज्ञान, चेतना, चित्त, बुद्धि तथा उपकरणों द्वारा सिद्ध किये जाते हैं।

(1) आधिभौतिक अर्थात् विज्ञान। (स्थूल स्तर)

(2) आधिदैविक अर्थात् (जो क्रिया को प्रदर्शित करता है) उन तत्वों का ज्ञान जो पूर्ण प्राकृतिक हैं।

(3) आध्यात्मिक अर्थात् आत्मा तथा सकल परमात्मा का ज्ञान एक रूप में।

आधुनिक विज्ञान का मार्ग मात्र पदार्थ के प्रभावों का अध्ययन करना है । जैसे वह परीक्षण से ज्ञात करता है उसे (सिद्धान्तों के आधार पर) वैसे ही निष्कर्ष निकालता है। परीक्षक का इन सब प्रक्रियाओं से कोई संबंध नहीं रहता है। आधुनिक विज्ञान केवल क्षेत्र का परीक्षण कर सकता (जिसमें क्रियायें स्वतः होती हैं) है।

वैदिक विज्ञान में जब किसी विषय का अध्ययन करते है; तब वह उस होने वाली प्रक्रिया का संबंध अपने आप के संदर्भ में भी विचार करता है; जिसमें अव्यक्त क्षेत्रज्ञ (आत्मा) तथा स्वतः होने वाली प्रक्रिया के क्षेत्र के संबंध को समझकर ज्ञानवर्धन करता है। इस प्रकार का ज्ञान पूर्णरूपेण एकीकृत क्षेत्र तथा नैसर्गिक नियमों का उसमें समावेश करके

क्रमवार होने वाली प्रक्रिया (उस क्षेत्र में हाने वाली) में सम्मिलित होता है। इस कारण अनन्त मार्ग तथा नैसर्गिक प्रक्रियाओं की भिन्नता का अनुभव करता है।

4. **आधिभौतिक क्षेत्र** :–

आधिभौतिक क्षेत्र में चार मुख्य बल हैं; जिसका संकेत ॐ है।

(1) गुरुत्वाकर्षण बल,

(2) विद्युत चुम्बकीय बल,

(3) क्षीण अथवा कमजोर नाभकीय बल,

(4) प्रबल नाभकीय बल।

चूँकि कमजोर और शक्तिमान परमाणु बल क्रिया के तापक्रम पर निर्भर करता है; इसे अग्नि कहा गया है। इसे एकीकृत आधिभौतिक क्षेत्र को एक गण अर्थात् तीन बलों पर निर्धारित किया है, ये बल निम्न हैं [1] :–

1. अग्नि

2. गुरुत्वाकर्षण बल

3. विद्युत चुम्बकीय बल

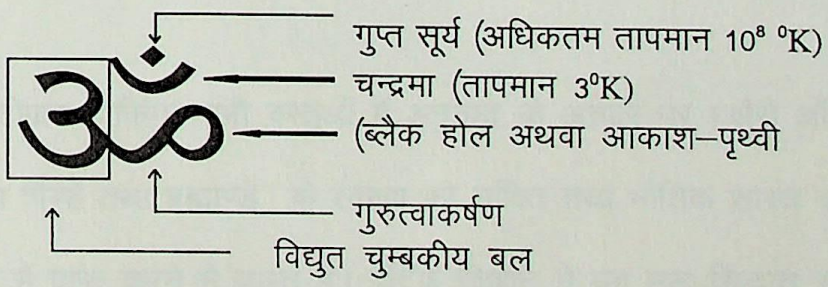

चित्र–2

उपर्युक्त ॐ की संरचना वैज्ञानिक एवं सादृश्यता एकता के आधार पर की

गई है। स्टीफन हॉकिंग आशावान हैं कि निकट भविष्य में इसका पूर्णतः हल गणित के समीकरण के रूप में प्राप्त हो सकता है।

ये बल स्वतः संचालित होने के कारण चेतना के रूप में व्यक्त होते हैं किन्तु मनुष्य अपनी आत्मा (अव्यक्त स्वतः संचालित चेतना) का तथा यह प्रक्रिया किस प्रकार चल रही है; उससे अनभिज्ञ रहता है। अतः यह अति आवश्यक है कि नैसर्गिक नियमों पर निर्भीकता को समझकर उसकी पूर्ण प्रक्रिया की स्वतः की क्षमता तथा तत्परता को इस एकीकृत क्षेत्र की अनुभूति कर लाभ उठाना चाहिऐ।

इस वैदिक ज्ञान में उसकी चेतना में जो विचार आते हैं तथा वह इन विचारों के आधार पर आचरण करता है; उसका मूल्यांकन स्वतः कर सकता है। इस प्रकार वह प्रकृति के विरूद्ध आचरण से बच सकता है। प्रकृति के सत्कर्मो के ज्ञान के कारण वह समाज में तथा अपनी जीवन शैली में मधुरता तथा संतोष प्राप्त कर सकता है। इसी अनुभूति से वह अपने आप पर नियंत्रण कर मनोवैज्ञानिक रूप से समाज तथा स्वतः का उद्धार कर जीवन की सार्थकता का निर्वहन कर सकता है। यह अवस्था का ज्ञान ध्यान योग से सहज रूप प्राप्त की जाती है; जिससे जीवन आनन्दमय हो जाता है। क्योंकि वह आत्म साक्षात्कार के पश्चात् व्यर्थ की इच्छाओं को सीमित कर सकता है तथा अमानवीय व्यवहार से अलग रह सकता है।

स्टीफन हॉकिंग[1] सभी वस्तुओं में अनुनाद के आधार पर थ्यौरी ऑफ एवरी थिंग अर्थात ''यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे'' के स्वरूप को गणित तथा भौतिक शास्त्र के माध्यम से समीकरण रूप में प्राप्त करने में व्यस्त हैं। वैदिक विज्ञान में यह मूल सिद्धांत सत्युग में

ही दिया जा चुका है। इसी कारण वेदान्त के अनुसार ''अह्म ब्रह्मास्मि'' की प्राप्ति होती है। यही ध्यान योग से कॉस्मिक ज्ञान प्राप्त होगा।

5. **एकीकृत क्षेत्र** :–

सृष्टि की प्रक्रिया के पूर्ण सूत्र नैसर्गिक अर्थात् प्राकृतिक नियम पर आधारित हैं। इस अधिभौतिक एकीकृत क्षेत्र तथा उनके अनन्त क्रियात्मक बल क्षमता का संकेत ॐ में निहित हैं। यह एकीकृत क्षेत्र भौतिक तत्वों की प्रक्रियाओं पर निर्भर करती है तथा जिस भव्य एकीकृत क्षेत्र की कल्पना आइन्स्टीन ने की थी; वह अत्यन्त प्रचण्ड क्षेत्र है क्योंकि उस क्षेत्र (गेलेक्सी) के वातावरण का तापक्रम सूर्य की सतह से 30,000 गुना अधिक है। यहीं ब्रह्माण्ड सृष्टि रचना की कल्पना की जा सकती है; जो मात्र विभिन्न अणुओं के निर्माण कर रुक जाती है।

यह अधिभौतिक क्षेत्र सदैव अक्षर ब्रह्म, नाद, ब्रह्म अर्थात् सर्वव्यापी ब्रह्म ॐ = श्री [1] का क्षेत्र भी है; जिसमें सभी विषयों का एकीकरण किया गया है।

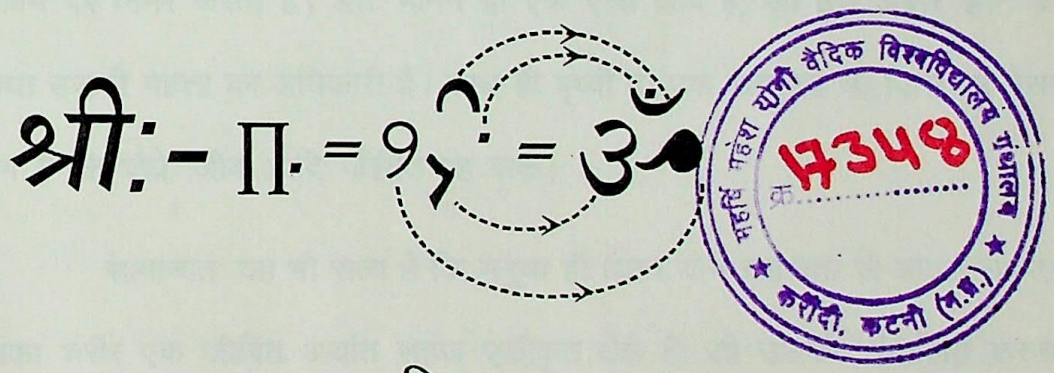

चित्र–3

जो स्टीफन हाकिंग के स्ट्रिंग सिद्धांत सदृश्य संस्कृत की देव नागरी वर्णमाला

The glimpses of a vedic unified system, M.K. Dave (A paper presented at all India Science Sanskrit conference at Gorakhpur Dec- 2000

Vedic Varnameru - A Step towords Unification of knowledge (A Paper Presented by prof M.K. Dave at world Sanskrit Conference - 2001 at Delhi.

एकमासीत् परं ब्रह्मा सूक्ष्म नित्यमतीन्द्रियम्।

अन्यक्तं ज्ञानरूपेण द्वैतहीन विशेषणम् ।। 6।।

प्रकृतिः पुरुषश्चैव नित्यो द्वौ सर्वसंहिता।

स्थितः कालोऽपि भूतेश्च जगत् कारणमेककम्।। 8।।

(कलिका पुराण–तीनों देवों का अनन्ततव्य, 7,8)

इस अर्धनारीश्वर के स्वरूप को जीवात्मा तथा आत्मा के रूप में अवलोकन किया जा सकता है क्योंकि ये अर्धनारीश्वर एकीकृत क्षेत्र का प्रत्येक स्थान पर संगम होता है, इस ब्रह्मा के रूप त्रिगुणात्मक (3 बिट का) का है तथा उसे भव्य ज्ञान क्षेत्र की उपाधि दी गई है; यह ज्ञान का क्षेत्र विषय के आधार पर है। इसके अन्तर्गत भाषा (संस्कृत) में मुख्यतः छन्दशास्त्र, विभिन्न आधुनिक विषय, नाट्य शास्त्र एवं संगीत जैसी अन्य विधायें एकीकृत होते हैं। इन विषयों पर प्राकृतिक नियम लागू होते हैं।

यहाँ यह ध्यान में रखना चाहिये कि एकीकृत क्षेत्र अलग–अलग गुण वाले है; जो तापक्रम पर निर्भर करता है। अतः मानव ही एक ऐसा जीव है; जो इस अपार ज्ञान के भंडार तथा उसकी महत्ता का अधिकारी है। साथ ही पृथ्वी ही एक मात्र ग्रह है; जिस पर ऐसा वातावरण है कि पौधे, जीव आदि जीवित रह सकें।

सामान्यतः यह भी सत्य है कि मनुष्य ही ध्यान योग सहजता से अपना सकता है। उसका शरीर एक जीवित अर्थात् सहज एकीकृत क्षेत्र है; जो उसको संचालित करता रहता है; जिसका आधार उसके जेनेटिक विज्ञान के नियमित रूप से चलता है। यही कारण है कि परमात्मा ने अपना रूप पुरुष को दिया। यह बाईबिल में भी लिखा है।

ध्यान योग के द्वितीय चरण में भव्य सृष्टि करने वाले को परमात्मा का बोध होता है; जिसे कॉस्मिक चेतना कहते है; जो प्रक्रिया अणुओं के निर्मित होने पर थम गयी थी । जिस कॉस्मिक स्तर पर ब्रह्मा के समान चेतना युक्त होती है; उसी अवस्थाओं में ध्यान योग की प्राप्ति होती है जबकि एकीकृत क्षेत्र के कारण उनकी प्राकृतिक कोशीय शरीर में गणितीय प्रक्रिया क्रम से चलती रहती है तथा समय का पालन करती है। शरीर हर पल बदलता रहता है अर्थात परिवर्तन का कारण है; उसमें प्रक्रिया एक के बाद एक निरंतर चलती रहती है किन्तु चेतना जाग्रत अवस्था में रहती है।

मनुष्य चेतना का भागीदार हैं। अतः उसे चाहिये कि उसे इस तरह प्रेरित करें; जिससे उसे उस शक्ति की प्राप्ति हो; जो मनुष्य के इस परिवर्तन को सुचारू रूप से ग्रहण कर सके।

यहाँ उसकी आत्मा स्वतः की चेतना के रूप में मन तथा तन को एकता प्रदान करते हुये विध्वंसकारी तत्वों को रोकने में कामयाब होती है। मन एक ऐसी कड़ी है; जो मूल तत्व (परमात्मा) से संबंध बनाये रखती है। अर्थात् जब ध्यान योग के द्वारा मन की चंचलता शांत होती है; तब चेतना आत्मा के अनुरूप स्वतः संचालित होती है।

महर्षि जी ने चेतना के एकीकृत क्षेत्र की अवस्था का अनुभव करते हुये कहा है कि वे इसमें एक अद्भुत अपरिवर्तनशील तथा असीमित शान्त चेतना की एकता का बोध करते हैं। इस आनन्दमयी शान्ति में वे सभी विषयों के प्राकृतिक नियमों की प्रगाढ़ एकता का अनुभव करते हैं; जो अव्यक्त है किन्तु उसकी अनुभूति देशकाल में मानव के उद्भव में सक्रिय रहती है। जिस तरह कि कवान्टम मेकेनिक्स की प्रक्रियाऐं क्रमवार लगातार होती रहती है,

उसी प्रकार मानसिक चेतना की प्रक्रिया भी विधिवत प्रकृति के नियमों के आधार पर विकसित होती रहती है जैसे कि वह स्वतः में परिपूर्ण है और अन्य वाह्य प्रक्रिया का उन पर कोई अधिकार है।

******

संगीत की उपयोगिता

संगीत मात्र मनोरंजन का ही साधन नहीं है। यह स्वर लहरियों का मन और मस्तिक पर पड़ने वाला प्रभाव है; जो मानव शरीर को विविध प्रकार से प्रभावित करता है। यही कारण है कि चिकित्सा के क्षेत्र में भी संगीत का प्रयोग किये जाने की धारणा बलवती हुई है।

भारत में ऋग्वेद सतयुग के समय का है; जोकि 35,000 से 40,000 वर्ष पूर्व में था। उस समय से ही संगीत के रागोपचारी गुणों को गाया और उसका उपयोग किया जाता था। पुरातन संतों में भी संगीत के इन गुणों को माना है। सामवेद के गायन का एक विशिष्टि अंदाज होता है। ईश्वर भक्ति, आणविक उल्लास तथा दिव्य ज्योति का भी संगीत के रोगापचारी गुणों में महत्वपूर्ण योगदान है।

आधुनिक वैज्ञानिक, खास कर मनोवैज्ञानिक सहमत है कि संगीत रोगों को रोक सकता है परंतु यह नहीं मानते की रोगों का उपचार इससे संभव है। वे यह मानते हैं कि संगीत से इद्रियाँ और भावनायें उद्वेलित होती हैं तथा रोगियों के मानसिक दशा में अद्भुत परिवर्तन होता है। जहाँ जागरूकता है वहाँ सचलता है तथा स्वरों में भावनाओं को स्वच्छ करने की अद्भुत शक्ति है जोकि भारतीय शास्त्रीय संगीत का मूल उद्देश्य भी है। यह मन की संरचना को भी परिवर्तित करता है।

ध्वनि के पिच और तीक्षणता को संगीत संतुलित करता है; जो निम्न तरीके से कार्य करता है।

1. जागरूकता संबंधी चेतना।
2. आंतरिक चेतना।
3. व्यवहार।

आंतरिक चेतना में परिवर्तन अनुभव किए जाते हैं; जो कि श्वसन दर से परिलक्षित होते हैं। जो मस्तिष्क जैविक द्रव्यों के बहाव को जोड़ों की ओर मोड़ता है। रक्त चाप में परिवर्तन शरीर में रसायनिक परिवर्तन, पाचन शक्ति में परिवर्तन इत्यादि है। आंतरिक चेतना तथा व्यवहार उपस्थित तंत्रिका द्वारा भावनाओं से नियंत्रित होता है; जो उत्पन्न ऊर्जा को विभिन्न अंगों की ओर प्रसारित करता है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रशंसक तो प्रारम्भ से ही यह मानते रहे हैं कि रागों के आरोह–अवरोह मानवीय उमंगों को प्रभावित करते हैं लेकिन अब पश्चिम देशों में भी स्ट्रेस मैनेजमेन्ट के नाम से ऐसे क्लीनिकों का प्रसार बढ़ता जा रहा हैं। जहां चिकित्सा के साधन के रूप में संगीत का प्रयोग किया जाता है।

1. **वाद्य संगीत** :–

जहां तक वाद्य संगीत का सवाल है। सर्वाधिक प्रभावकारी बॉसुरी के स्वर को माना गया है। बांसुरी के समानान्तर रूप में निकलने वाली तरंगें सीधे मानसिक चक्रों को प्रभावित करती हैं। भारतीय शास्त्रीय राग रागिनियों के प्रभाव को हमेशा मुक्त कंठ से स्वीकार किया जाता है।

यह माना जाता है कि मेघमल्हार के स्वरों में बारिश करवा देने की और दीपक राग के स्वरों में बारिश रोक देने की क्षमता है। जिन स्वर लहरियों के बारे में यह माना जाता है कि जो प्रकृति को भी संचालित कर सकती है; उन्हीं स्वर लहरियों का प्रभाव यदि श्रोता के मन मस्तिष्क पर बहुत गहराई तक पड़े तो आश्चर्य नही होना चाहिये। पाश्चात्य संगीत इस दिशा में हानिकारक पाया गया है। निराशाजनक तथा शोर शराबे वाले संगीत का स्वास्थ पर विशेष कर मेरुदण्ड पर हानिकारक प्रभाव होता है।

जिस तरह त्यौहार ऋतुओं के आधार पर होते हैं; उसी प्रकार समय संगीत भी अनुकूल हर्षोल्लास के वातावरण निर्मित करते हैं। संगीत की परपंरा कुछ घरानों में सवारी जाती रही है। अनुवांशिकी तौर पर इन घरानों में संगीत को प्रोत्साहित करता है तथा पुराने शास्त्रीय संगीतों को अभी तक बचा पाया है। भले ही आज लोग न जानते हों कि संगीत मात्र कला ही नहीं है बल्कि उसके हर पक्ष में गणित और प्रकृति का समावेश है।

अमेरिका के संगीत रचने वाले जार्ज गिर्शिविन संगीत को भावनात्मक विज्ञान मानते हैं क्योंकि संगीत में जिन तरंगों का उपयोग होता है; वह मन तथा शरीर में हारमोन्स पर असर करते हैं।

ग्वालियर घरानों में वंदिश को कड़ाई से पालन किया जाता हैं। पहले रागों की पांच छः बंदिश ही सिखाई जाती है; जिसमें बीस साल तक व्यतीत हो जाते हैं। घराने को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यहाँ गरु की आवश्कता नहीं होती क्योंकि संगीत पीढ़ी दर पीढ़ी इस घराने में चलता आ रहा है।

आजकल इनके कैसेट बन रहे हैं। जितना आनन्द स्वतः गायक के सामने सुनने में आता है; वह कैसेट में नहीं प्राप्त होता। गायक झूम–झूम कर गाते समय हस्त कला के माध्यम से संगीत की लहरियों को समझते रहे हैं। इन संगीत सभाओं में भाग लेने वालों की सख्या जरूर कम होती है किन्तु गायक और सुनने वालों के बीच कदरदानों का रिश्ता होता है।

भारतीय वाद्य यंत्रों के सिद्धांत के अध्ययन करने पर हम यह भलीभांति कह सकते हैं कि करीब 20 हजार वर्ष पूर्व ही सत्य युग में ही गंधर्वों ने पुरातन कम्प्यूटर सिस्टम पर यह अध्ययन कर लिया था। कम्प्यूटर द्वारा संगीत का हर सम्भव विकास करने के पश्चात् जब यह पाया

कि कम्प्यूटर के कारण कलाकार की दक्षता समाप्त हो जाती है; तब उन्होने कम्प्यूटर को अलग कर दिया। इसके जगह उन्होंने कम्प्यूटर सिंथेसाइजर का इस आधार पर उपयोग किया। जो वर्ण मेरू,खण्डमेरू और द्रुतमेरू का उपयोग किया और ऐसी विधियों को अपनाया जिसमें पर्यावरण का उपयोग हो, अंलकारों द्वारा भावनाओं का समावेश किया और संगीत को विभिन्न समारोहो और दिन रात के विभिन्न पहरों के साथ जोड़ा।

2. <u>संगीत के गुण</u> :–

मानव की स्वाभाविक पुष्टि क्षमता के विकास में हिन्दुस्थानी संगीत जो उत्तरीय भारत में विकसित हुई तथा परशिमा, अरेबिया तथा मध्य एशिया से प्रभावित होता रहा। दूसरी धारा दक्षिण भारत का कर्नाटक संगीत जो द्रविड़ सभ्यता के अनुकूल है।

दोनों प्रणालियों में राग का उपयोग होता है। भिन्न भिन्न म्यूजिक स्केल पर इन रागों की रचना की जाती है तथा उसी के अन्तर्गत वह संगीत बाद्य किया जाता है। इस कला में ताल जो पुनः–पुनः एक चक्रीय लय में बद्ध होते हैं। अलग अलग वाद्य यंत्रों में होल अथवा ढेका बजाया जाता है।

राग कितने प्रकार के हो सकते हैं; वह "क ट प यादि संख्या के आधार पर निर्धारित को गई है। राग में सामूहिक तथा एकल गायन प्रस्तुत किया जाता है। एकल गायन में एक गायक वाद्य यंत्र को ही बजाता है तथा उसके ताल तथा लय के लिये ढोल, तबला, मृदंग के साथ एक सहायक रूप दिया जाता है। कुछ गायक मात्र गायकी की प्रस्तुति स्वयं करते हैं जबकि अन्य वाद्य उनके साथ बजाते हैं। इससे गायक की शैली में राग सीमित हो जाते हैं अर्थात् गायक की क्षमता पर निर्भर करती है।

शास्त्रीय संगीत गणित विज्ञान के आधार की कला है। इस कला का निखार गायक की प्रस्तुति और इसकी मधुरता पर निर्भर करता है। हिन्दुस्थानी शास्त्रीय संगीत कर्नाटक संगीत की तुलना वाद्य यंत्र को प्राथमिकता देता है। साथ ही साथ नृत्य को भी प्रस्तुत किया जाता है। गायन आलाप की विविधता के साथ शुरू होता है; जिसमें राग का समावेश जरूरी नहीं है।

इस आलाप के बाद जो गीत की संरचना प्रस्तुत की जाती है; वह राग ताल से मिश्रित करके गायी जाती है। मौखिक गायन में कुछ रागों का प्रयोग सामान्य तौर पर पसंद किया जाता है। जैसे ध्रुपद, ख्याल या गजल, धार्मिक अथवा प्रेम प्रसंग को महत्व देता है।

अधिकतर संगीत प्रेमी शास्त्रीय संगीत को ही पसंद करते हैं। पूर्व में इस परम्परा को राजवंश ने ही प्राथमिकता दी थी।

3. **संगीत से चिकित्सा** :–

भारतीय शास्त्रों में शब्द को नाद ब्रह्म बताते हुये इसे परम शक्ति रूप में निरूपित किया गया है। वेद मन्त्र का उच्चारण स्वास्थ्य के लिये लाभकारी बताया गया है। इसके लिये आवश्यक है कि सुनने वालों के मन को आधीन करने के लिये संगीत के प्रभाव को एक मन को एकाग्र करके स्वीकार किया जाता है।

एक पौराणिक प्रसंग में अश्विनी कुमार उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य से कहते हैं कि मधुर गीत के श्रवण से मन और शरीर स्वस्थ रहते हैं। जहाँ तक भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रश्न है, अश्विनी कुमार ने जो चार प्रकार के भेषज तंत्र बनाये हैं। जो पवनी कण, जली कण, बनीकण और शब्दीकण हैं।

शब्द के प्रभाव को अनन्त और असीम माना जाता है। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में ज्वर, दमा, मधुमेह, हृदय रोग–राजयक्ष्मा आदि रोगों के लिये विशिष्ट यंत्र निर्धारित किये गये हैं। यह कहा जाता है कि ये यंत्र वाणी के जितने गहरे स्तर में जाग्रत होंगे; इनका प्रभाव भी उतना गहरा होगा।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक लेवर लेजारिया द्वारा किया गया शोध उल्लेखनीय है। लेजरिया ने ओंकार के मंच के उच्चारण के विभिन्न स्तरों के शरीर के विभिन्न अंगों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया। इस अध्ययन के अनुसार प्रणव ॐ के उच्चारण से हृदय, पेट, गले, फेफड़ों, मस्तिष्क तथा सूक्ष्म इंद्रियों पर प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार हूं के उच्चारण से पेट, जिगर, दाँतों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

संगीत हमारी भावनाओं को प्रदर्शित करने में ही सहायता प्रदान नहीं करती अपितु पुराने हिन्दी फिल्मी गानों में उपचार करने की अद्भुत क्षमता पाई गई है। यह रक्त चाप और डिप्रेशन को कम करती है। मधुमेह रोगियों के लिए यह लाभप्रद है।

स्मरण शक्ति के लिए संगीत सहायक हैं। बुजुर्गों ने अध्ययन से पाया कि शान्ति की अपेक्षा स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिए संगीत ज्यादा कारगर सिद्ध है। रॉयल होलोवे कॉलेज, लंदन में एक अध्ययन के दौरान लोगों से अतीत के बारे में प्रश्न किए गए और यह पाया गया कि यदि पार्श्व संगीत बज रहा हो तो अतीत का स्मरण ज्यादा स्पष्ट और सरल हो जाता है। संगीत से वही असर होता है; जो भावातीत ध्यान से होता है। वैदिक वायब्रेसन टेक्निक के द्वारा गठिया और मधुमेह रोगों का उपचार किया जाता है। इस उपचार को महर्षि वैदिक वायब्रेसन टेक्नोलॉजी (MVVT) कहते हैं।

शब्द के प्रभाव को अनन्त और असीम माना जाता है। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में ज्वर, दमा, मधुमेह, हृदय रोग–राजयक्ष्मा आदि रोगों के लिये विशिष्ट यंत्र निर्धारित किये गये हैं। यह कहा जाता है कि ये यंत्र वाणी के जितने गहरे स्तर में जाग्रत होंगे; इनका प्रभाव भी उतना गहरा होगा।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक लेवर लेजारिया द्वारा किया गया शोध उल्लेखनीय है। लेजरिया ने ओंकार के मंच के उच्चारण के विभिन्न स्तरों के शरीर के विभिन्न अंगों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया। इस अध्ययन के अनुसार प्रणव ॐ के उच्चारण से हृदय, पेट, गले, फेफड़ों, मस्तिष्क तथा सूक्ष्म इंद्रियों पर प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार हूं के उच्चारण से पेट, जिगर, दाँतों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

संगीत हमारी भावनाओं को प्रदर्शित करने में ही सहायता प्रदान नहीं करती अपितु पुराने हिन्दी फिल्मी गानों में उपचार करने की अद्भुत क्षमता पाई गई है। यह रक्त चाप और डिप्रेशन को कम करती है। मधुमेह रोगियों के लिए यह लाभप्रद है।

स्मरण शक्ति के लिए संगीत सहायक हैं। बुजुर्गों ने अध्ययन से पाया कि शान्ति की अपेक्षा स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिए संगीत ज्यादा कारगर सिद्ध है। रॉयल होलोवे कॉलेज, लंदन में एक अध्ययन के दौरान लोगों से अतीत के बारे में प्रश्न किए गए और यह पाया गया कि यदि पार्श्व संगीत बज रहा हो तो अतीत का स्मरण ज्यादा स्पष्ट और सरल हो जाता है। संगीत से वही असर होता है; जो भावातीत ध्यान से होता है। वैदिक वायब्रेसन टेक्निक के द्वारा गठिया और मधुमेह रोगों का उपचार किया जाता है। इस उपचार को महर्षि वैदिक वायब्रेसन टेक्नोलॉजी (MVVT) कहते हैं।

मुगलकाल के प्रसिद्ध संगीतज्ञ ने रागपूरिया सुनाकर चकेरों के राजा राजसिंह को अनिन्द्रा से मुक्त कर दिया था। उस्ताद सूरज खाँ ने रामपुर के नवाब को राग जै जैवन्ती सुनाकर लकवे से निजारद दिलायी थी।

अमेरिका के प्रसिद्ध संगीतज्ञ डॉ. पोगेलस्की ने संगीत की सहायता से अनेक रोगियों के पथरी का उपचार किया था जबकि कैलिफोर्निया की आर. आर. फोर नामक संस्था में कार्यरत एक नर्स ने संगीत की सहायता से एक गूंगे व्यक्ति को फिर से बोलने की शक्ति दी। जर्मनी के डॉ. जोहांस ने संगीत के माध्यम से पशुओं तक का उपचार करने का दाबा किया है।

सेन्फ्रांन्सिको के वालेजो जिले में बस स्टैंड के इर्द गिर्द मधुर व शांत आर्केस्ट्रा बजाने तथा नाट्य दृश्य प्रदर्शन करने का वहॉ के जन सेवा अधिकारियों ने व्यवस्था की थी। इनका उद्देश्य संगीत पर मुनष्य के ऊपर, असर को जानना था। इसका परिणाम यह हुआ कि संगीत के कारण अपराधों में एकाएक कमी हुई तथा व्यर्थ विचरण करने वाले व्यक्तियों की वृत्ति में आधे से ज्यादा कमी हुई। पुलिस अफसर ब्रैट क्लार्क ने संगीत के माध्यम से सामाजिक बुराईयों को कम करने के उद्देश्य से संगीत तथा नृत्य नाटकों के प्रदर्शन को अन्य सड़कों व नुकड़ी की व्यवस्था करने की सिफारिश की है; जिससे व्यक्ति के चरित्र तथा नैतिक आचरण का उत्थान हो सकेगा।

अमेरिका के दिसबर्ग के शल्क लोरेन्स हीथ ने एक रोगी का संगीत से सफल उपचार किया है। बाद में उन्होंने रिकार्डिंग कार रिलेक्सेशन, रिफलेक्सन्शन, रेस्पोंस एण्ड रिकवरी नामक एक संस्था का गठन कर डाला जो आज भी संगीत के माध्यम से रोगियों का उपचार करने की दिशा में उल्लेखनीय है।

भारतीय शास्त्रीय रागिनियॉ कुछ विशिष्ट रोगों के उपचार में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जैसे राम भूपाली और राग तोडी उच्च रक्तचाप के मरीज को तथा राग मालकौस

और रागआसावरी निम्न रक्तचाप के मरीज को आराम दिलाती है। तनाव की वजह से अनिन्द्रा रोग के शिकार व्यक्ति के लिये राग भैरवी लाभदायक है जबकि मानसिक श्रम के बाद मन और मस्तिष्क को तरोताजा रखने में रागशिवरंजनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

भारत में महाराष्ट्र के कार्ले की ऐतिहासिक बौद्ध गुफाओं के निकट स्थित "आत्म संतुलन" नामक संस्था ने सभी निष्कर्ष निकाले हैं। शोधकर्ताओं का प्रभाव अन्य कलाकारो की तुलना में अधिक स्पष्ट और तीव्र होता है। इस संस्था के आयुर्वेद के शोधकर्ता डां. बालाजी ताम्बे की यही मान्यता है।

भारत वर्ष में एकमात्र भूमिगत रेल चलाने वाला शहर कोलकाता में लोगों द्वारा इन भूमिगत मेट्रो रेलों की पटरियों पर कूदकर आत्महत्या करने की घटना में तेजी से वृद्धि हो रहा है। 1984 से अब तक 60 लोगों ने मेट्रो रेल की पटरियों के नीचे आकर आत्महत्या करने का प्रयास किया जबकि 26 लोग अपनी जान से हाथ धो बैठे। केवल इसी वर्ष (2000–2001) में 7 लोगों ने आत्महत्या की है। आत्महत्या के विशेषज्ञों का मानना है कि चूंकि मेट्रो स्टेशनों में बिल्कुल शांति होती है और वह दुनिया की भीड़ भाड़ से अलग होता है इसलिये कुंठाग्रस्त या भावनात्मक रूप से कमजोर लोग यहां आत्म हत्या के लिये जल्दी प्रेरित हो जाते हैं।

मेट्रो रेल अधिकारियों ने आत्महत्या की । इस समस्या को रोकने के लिये शास्त्रीय संगीत का प्रयोग किया। अब उन्होंने करीब 17 मैट्रो स्टेशनों पर भारतीय सुगम संगीत के कैसटों को बनाने का निर्णय लिया है । इस संगीत को आत्महत्या करने के मनोवैज्ञानिक के अनुसार तैयार किया गया है। मैट्रो अधिकारियों का मानना है कि आत्महत्या की तरफ प्रेरित होने वाले लोग इस भारतीय शास्त्रीय संगीत को सुनकर आत्महत्या करने के विचार से विमुख हो जायेगा और फिर वह सामान्य स्थिति में वापस लौट आयेगा।

गन्धर्व वेद जो चौथा उपवेद कहा जाता है; इसमें नाद तथा मंत्रों को तारों से संबंधित कर अध्यात्म के स्तरों की चर्चा है।

स्वामी सच्चिदान्द ने आधुनिक आवश्यकताओं को समझने पर पड़ने वाले असर द्वारा रोग निदान हेतु आध्यात्मिक व देव स्तुति के मंत्रों तथा प्रार्थनाओं पर अनुसन्धान किया है। उनके अनुसार मात्र रागों पर ही प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि राग के साथ प्रयुक्त वाद्य यंत्रों, नृत्य मंडली के दृश्यों का भी असर मन पर पड़ता है। मन पर विद्या का मर्म जानना अति आवश्यक है; इसके द्वारा कमजोर व्यक्तित्व, डायबिटीज, रक्तचाप तथा हृदय रोगियों का निदान किया जाता है।

स्वामीजी के अनुसार मनुष्य के शरीर में 72000 astral (एसटर्ल)नर्वेलुसल तथा 76 vital nerves(वीटल नर्वस) होते हैं; जो एक निश्चित जियामिक पेटर्न में कंपित होते हैं, इन जिथमिक पेटर्न में परिर्वतन आना ही रोगों की जड़ है। इन जिथमिक कंपनों को सामान्य स्थिति में लाने के लिये दक्षिण भारतीय का निवारण किया जाता है।

जो व्यक्ति संगीत में निपुण होते हैं; उनके मस्तिष्क में ग्रेमेटर अधिक पाया गया है। ऐसे विद्यार्थी गणित में प्रवीण होते हैं। आधुनिक संगीत को पसन्द करने वाले शास्त्रीय संगीत के प्रति संवेदन शील नहीं होते हैं।

सामान्य तौर पर संगीत तथा विशेषकर आध्यात्मिक संगीत में हार्मोनी तथा शांति के वातावरण की क्षमता है। ऐसा कहा जाता है कि जंगली जानवर जब संगीत सुनते हैं; तब वे शिकार करते समय रुक जाते हैं। संगीत व्यक्तिगत, सामाजिक या क्षेत्रीय बंधनों को नहीं मानता। अन्तर्देशीय संगीत सम्मेलनों में एक स्वछन्द वातावरण होता है; जो देशों की सीमा के परे है। संगीत प्रेम तथा शांति का बीज है; जो मानव मन पर खास तौर पर नवयुवकों के मन मस्तिष्क पर सीधा असर करता है। सम्पूर्ण मानव जाति सहानुभूति, खुशहाली तथा आध्यात्मिक विकास में सहायक

होता है। यदि विभिन्न समुदायों अथवा देशों में यह बिन्दु समझ लिया जाय; तब आपसी भेदभाव को भुला कर विश्व में शांति कायम की जा सकती है।

4. **भारतीय संस्कृति में संगीत** :–

हिन्दू समाज में पूजा के समय शंख, घंटी अथवा घंटे बजाकर प्रार्थना की जाती है। शंख बजाने से फैफड़ों की क्षमता बढ़ती है तथा श्वास की बिमारियों में लाभकारी है। शंख ध्वनि की तरंगें रोगाणु नाशक हैं। यह तत्व बलिन के शोध कर्ताओं ने 1928 में किये गये शोध में पाया हैं । आवाज की ध्वनि 2200 फीट प्रति सेकेण्ड से प्रवाहित होती है; जो रोगाणुओं को नाश करने में सक्षम है। जहां तक इसकी ध्वनि प्रसारित होती है; वह स्थल शुद्ध हो जाता है। यह ध्वनि, मिर्गी, चक्कर आना, कंठमाला और कुष्ठ रोगियों के लिये उपयोगी पाई गई है।

अफ्रीका में घंटों के नाद द्वारा सर्फदंश का उपचार करते हैं।

पुराने संगीतों में भी रोगों का उपचार करने की क्षमता है। आज संगीत चिकित्सा का प्रचलन होने जा रहा है । भारतीय संगीत रागों पर आधारित है तथा उन गीतों को ध्यान से समय के अनुकूल सुनने पर स्वास्थ्य लाभ होता है। ये उत्तर भारतीय संगीत मिश्रित रागों पर रचे गये हैं। भैरवी राग सुबह 4 और 8 बजे सुबह तक लुभाने वाली है। चिकित्सा के लिये संगीत को कम से कम तीन रोज 1 घंटे प्रतिदिन सुनना चाहिये।

प्रत्येक राग में अलग अलग 'रस' हैं; [10] जो गीतों का अलंकरण करते हैं। सात स्वर विभिन्न रसों का निर्माण करते हैं।

सा– वीर रस

रे – अद्भुत रस

गा – करूण रस

मा – हास्य रस

पा – श्रृंगार रस

धा – वीभत्स रस

नी – करुण रस

यह रस अथवा अलंकार रागों के लिए उपयोगी है; जोकि भावनाओं, हृदय के आवेगों पर असर करते हैं तथा मन को एकाग्र करने में सहायता प्रदान करते हैं और दिव्य शांति के अनुभव को प्राप्त होने में मदद करते हैं।

अतः शास्त्रीय संगीत के द्वारा मानसिक अस्थिरता, उच्च रक्त चाप, अनिद्रा, हृदय रोग, थकान तथा अन्य रोगों के रोगियों का उपचार संभव है। मनोरंजन स्त्रोत के अलावा शास्त्रीय संगीत के द्वारा हमें आत्मा के दर्शन होते हैं।

संगीत सुनने से क्षमता बढ़ जाती है। जैसे–जैसे संगीत की स्वर लहरियां तीव्र होती है; वैसे वैसे मन की एकाग्रता बढ़ जाती है। वीर रस के गीत इन लोगों के लिये उपयुक्त है; जो गमगीन तथा सुस्ती का अनुभव करते हो।

संगीत के स्वर लहरियां में जो संगीतज्ञ वाद्य यंत्रों के साथ गाता है; मस्तिष्क के क्षेत्र में संकेतिक भाषा के रूप में रिकार्ड हो जाता है। मस्तिष्क का वह भाग ग्रेमेटर कहलाता है। यह संगीतज्ञ तथा कलाकारों में अधिक मात्रा में होता है। जनरल नेचर सितम्बर 98 के अंक में यह शोध प्रकाशित हुआ है। शोधकर्ताओं ने संगीत कलाकारों के साथ अन्य व्यक्तियों के मस्तिष्क का परीक्षण चुम्बकीय मस्तिष्क इमेजिंग मशीन से किया। मस्तिष्क वह भाग जिसे ऑडिटरी कारटेक्स (auditory cartax) कहते हैं; जहां ध्वनि का संग्रहण होता है उसका परीक्षण किया। जहां की

कल्याण, संक्षिप्त नाद–विष्णुपुराणाङक (28 वर्ष का विशेषाङक) कल्याण– कार्यालय गीता प्रेस, गोरखपुर

कोशकाएं जिन्हें न्यूरॉन कहते हैं। ध्वनि के विभिन्न आवृत्तियों के प्रति संवेदनशील होती हैं। अति सूक्ष्म न्यूरॉन जो ध्वनि के प्रति संवेदना प्रदर्शित करती है; एक छोटे से द्वीप के रूप में एकत्रित रहती है। इस ध्वनि आवृत्ति का नक्शा ऑडिटरी कार्टेक्स बन जाता है। ये स्पेशलइज्ड कोशिकाऐं अन्य प्राणियों में स्थिर नहीं होता, ऐसा न्यूरो वैज्ञानिक डॉ. क्रिस्टो पेन्टेक्स का मानना है। वे म्युन्स्टट विश्वविद्यालय के जर्मनी की प्रयोगशाला में प्रयोग करके यह ज्ञात किया कि ये कोशिकाऐं चोट लगने से सिकुड़ जाती है तथा अध्ययन के समय वे फैलती हैं। शोधकर्ताओं ने 12 संगीत में पवीण लोगो के साथ 13 व्यक्तियों के समूह जिन्होंने संगीत नहीं सीखा, ऐसे परीक्षण किया जब ऑडिटरी मस्तिष्क के उस क्षेत्र (images) का परीक्षण किया। इस परीक्षण में पिआनों के नोट्स दोनों समूहों को सुनाया, उन्होंने मेगनेटिक फलक्स से यह पाया कि संगीतकार की संवेदनशीलता ध्वनि की 25% थी; जो संगीत न जानने वाला था, उनमें प्रक्रिया का कोई अंतर नहीं आया किन्तु जब उन्हीं दोनों समूहों को पिआनों के नोट्स के एवज में एक सी आवृत्तियों की बीप ध्वनि सुनाने पर उनके मस्तिष्क की प्रक्रिया एक सी पाई थी। कुशल संगीतकार पिआनों की ध्वनि को सवारने के लिये अधिक न्यूरान्स का उपयोग करते हैं क्योंकि उनमें ध्वनि के सिनक्रोमाइस करने की (Synchromise) आदत होती है।

5. संगीत का इतिहास :–

संगीत को 35,000 वर्ष पुराना मानना चाहिये किन्तु खुदाई में मिले पत्थर युग के हथियारों के साथ हड्डियों से बनी बांसुरी 36,000 वर्ष पूर्व की आन क्रांस जर्मनी में प्राप्त हुई है। कुछ ऐसे पत्थर भी प्राप्त हुये हैं; जो लटकाकर ठोकने पर तरह तरह की ध्वनि निकालते हैं। डॉ. स्टीफेन स्मिथेन (जो रीडिंग विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं) कहते हैं कि हमारे पूर्वज और उससे पहले संगीत की रचना किए होंगे।

संगीत मानव के जीवन का एक मुख्य अंग है। यह मनुष्य की सर्वप्रथम भावनाओं को व्यक्त करने की भाषा है। संगीत संगीत एक विज्ञान और कला भी है। वाद्य यन्त्रों को 53,000 वर्ष पूर्व फ्रांस तथा स्लीवेनियां में प्राप्त हुये हैं; जिसके स्वर प्रखर तथा शुद्ध हैं।

बायोलाजिकल इन्स्टीट्यूट मेसेचुसैटस के एक वैज्ञानिक के अनुसार कई प्राणियों को गीत पसंद होता है। जैसे व्हेल (पुरुष) मछली सुरों को सजाकर गाती है। पक्षियों में कोमल, पपीहा, हरमिट भ्रस, तोता, हमिंग बर्ड आदि सभी पक्षियों के अपने अपने सुर होते हैं। पक्षियों में वाद्ययंत्र बजाने की क्षमता भी है। पायकाकेट जो उत्तरी आस्ट्रेलिया में पाई जाती है। लकड़ी के टुकड़ों से ड्रम स्टिक बजाती है। डचूक विश्वविद्यालय के न्यूरो बायोलाजिस्ट ऐरिक जारइस के अनुसार तोता मस्तिष्क के वही सात केंडो का उपयोग करते हैं, जैसे मानव करता है।

संगीत युवावस्था में मन पर छा जाता है तथा वृद्धावस्था में प्रार्थना का रूप ले लेता है इसीलिये कई गांवों में शव के साथ बाजे बजाने की प्रथा वैसे ही है जैसे आज के मिलिटरी बैंड मकल (कपड़े से ढककर) करके बजाये जाते हैं। अतः जीवन में जब भी कोई कार्यक्रम हो शादी इत्यादि तथा त्यौहार में संगीत मंडली अनिवार्य है। गांव में रात के मध्य में ढोल बजते सुनाई पड़ते हैं; जिससे मेहनत करने वाले श्रमिक थकान से छुटकारा पाते हैं। जंगलों में आदिवासी आग के चारों और नाचते गाते हैं, जैसे सैनिक, कैम्प में ड्रम बजाकर जश्न मनाते है; जिससे उत्पन्न ध्वनि मन को झकझोर देती हैं।

कब्बाली तथा राधा की सूफी संत द्रुपद में गाते हैं । सिख धर्म में 31 अध्यायों को राग के नाम से संजोया गया है। कीर्तन भक्ति गीतों से सद्भावना की उत्पत्ति होती है।

6. <u>संगीत और रंग</u>[10] :–

संगीत रंगीला होता है। संगीत तथा रंग का महत्व व्यक्तिगत जीवन पर राज्य

करता है। पक्षी सुबह होने पर चहचहाते हैं; उसी समय ऊषा के आगमन पर रंगीन फूलों की बहार होती है।

रंग वैसे ही संगीत का साथी हैं जैसे इन्द्रधनुष का किरणों के साथ है। जिस तरह संगीत सम्मेलन में गायक की एक छोटी सी त्रुटि ताल लय को भंग करती है वैसे ही रंगों का सही समन्वय के साथ मस्तिष्क का होता है।

लाल रंग रक्त तथा अग्नि के समान उत्तेजन होता है। नीला रंग शीतल का होता है अतः इसका उपयोग सोने के कमरों के लिये उचित होता है। संतरे के रंग से बच्चों का कमरे को रंग काला रंग अंधेरी रात का प्रतीक अर्थात् मृत्यु होने पर शोक का प्रतीक है। अतः संस्कार में इस रंग का उपयोग वर्जित है। हरा रंग प्रकृति की जवानी तथा आशा का प्रतीक है। अतः सेना मे सैनिक गोली का निशाना लगाने के पूर्व चारों तरफ की हरियाली को देखने से आँख को ठंडक मिलती है। सफेद रंग सुद्धता का प्रकाश है अर्थात् एकत्व, जिसमें सात रंग शोषित हैं।

जिस तरह एक रंग दूसरे रंग के साथ मिलाकर कइ अलग अलग रंग तैयार किये जा सकते हैं। इसी तरह संगीत में सात स्वरों को लयवद्ध करता है; जो वातावरण को रंगयुक्त कर देता है। अतः रंग और संगीत का संगम अनिवार्य हो जाता है।

******

ध्वनि संबंधी मुख्य तथ्य

संगीत में ध्वनि के विज्ञान को जानना अति आवश्यक है। संगीत विषय का भौतिक एवं गणितीय सामान्यतः तुलनात्मक है। इससे यह ज्ञात होता है कि वैदिक विज्ञान में संगीत मात्र कला ही नहीं है बल्कि उसका प्रतिष्ठित आधार वर्णमेरु के गणितीय अंगों पर है।

ध्वनि का अर्थ :–

ध्वनि एक प्रकार की ऊर्जा है। प्रायः ध्वनि शब्द को निम्न दो अर्थों में प्रयुक्त करते हैं।

(i) श्रवण तन्त्रिका के उत्तेजन के कारण कान पर उत्पन्न संवेदन।

(ii) किसी माध्यम तंत्रिका में वह बाहरी विक्षोभ या तरंग गति जो कान की श्रवण तन्त्रिका को संवेदित करती है।

ध्वनि की उत्पत्ति[11] :–

जिस प्रकार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति बिग बेंग के साथ मानी जाती है। उसी प्रकार ध्वनि की अर्थात् वाक् की उत्पत्ति वेदों में मानी जाती है।

वर्तमान समय में ग्लोबल ऑसिलेशन नेटवर्क ग्रुप द्वारा सूर्य का अध्ययन किया जा रहा है; जो स्वर से सम्बन्धित है। यह स्वर (सूर्य के साथ) सम्बन्धी अध्ययन हमारे वैदिक पुराणों में किया जा चुका है। ठीक इसी प्रकार भूगर्भ शास्त्री भूकम्प के कम्पन में स्वरों का अनुभव किया है।[11]

संगीत की उत्पत्ति सूर्य से :–

ग्लोबल ऑसिलेशन नेटवर्क ग्रुप (GONG) के 6 ओवजरवेटरी (उनमें से एक उदयपुर में है)[11] द्वारा सूर्य में होनेवाले सूक्ष्म कम्पनों का अध्ययन किया जा रहा है; उनके अनुसार सूर्य की सतह का क्षेत्र ऊपर नीचे एक निश्चित आवृत्ति के साथ कम्पन करता है। जैसे हृदय का स्पन्दन अथवा भूकम्प का स्पन्दन होता है। संगीत की भाषा में यह करीब 20 दोलन/सैकेण्ड अथवा 20 हर्ज होती है। इन दोलनों में ध्वनि उत्पन्न होता है; जो गैस में उत्पन्न होने वाली एकास्टिक तरंग है; जो कम्पन के कारण उत्पन्न होती है। जैसे कि किसी संगीत वाद्य यंत्र के द्वारा डोमिनेंट टोन के अलावा हारमोनिक टोन भी प्रयुक्त होता है। अतः सूर्य की लगभग 10 मिलियन आवृत्ति होती है; जो 88 नोड्स के समकक्ष है।

इसी प्रकार स्पेश रिसर्च सेन्टर, (अमेरिका) अन्तरिक्ष में एक सेटेलाइट भेजना चाहता है; जो सूर्य से निकलते हुये 12 स्वरों की जानकारी प्राप्त करेगा।

यह हमारे शास्त्रों में पहले ही वर्णित है। वैदिक शास्त्र में हनुमान जी के सूर्य संवाद[12] में दिया गया है कि हनुमान जी ने सूर्य से 12 स्वरों का ज्ञान प्राप्त किया; इसमें से सप्त स्वर (सा,रे,ग,म,प,ध,नि,स) हमारे संगीत में वाद्य यंत्रों के द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं।

******

श्री हनुमान अंक, कल्याण वर्ष 49 जनवरी 75, पेज–388 संगी परिजात भादोकाल कालदर्शी

ध्वनि तरंग एवं दोलन – डी. के. त्यागी, डी. सी. त्यागी, जय प्रकाश नाथ एण्ड कं.; मेरठ

वाद्य यंत्रों में ध्वनि के वैज्ञानिक सिद्धांतों का वर्णन

भौतिक विज्ञान में ध्वनि की परिभाषाऐं :–

प्रत्येक ध्वनि किसी वस्तु के यांत्रिक कम्पन से उत्पन्न होती है। अर्थात् प्रत्येक कम्पन वाली वस्तु कम्पन करने वाली वस्तु होती है। उदाहरण के लिये वायलिन या सितार के तने तार को बजाने से ध्वनि उत्पन्न होती है।

किसी भी प्रकार की ध्वनि को उत्पादन का पूर्ण अध्ययन करने के लिये वस्तुओं के कम्पन का पूर्ण अध्ययन करना है; जिसके लिये वस्तुओं की आर्वत गति और सरल आर्वत गति का अध्ययन करेंगे [1]। जो निम्न है।

तार पर हॉरमोनिक ओवरटोन :–

यदि किसी तार के दोनों सिरों को किसी वस्तु में क्लेम्प करके बीच में लम्बवत् खींचा जाता है तब तार एक निश्चित आवृति में कम्पन करने लगती है। यदि

T - तार पर लगाया गया बल -

m - तार के इकाई लम्बाई का द्रव्यमान

t - कम्पन में लगा समय

तब तार की आवृत्ति $n = \frac{1}{2t}\sqrt{\frac{T}{m}}$

उपरोक्त तार के कम्पन में तार के दोनों सिरे तो स्थिर रहेंगे किन्तु तार के बीच के सिरों में कम्पन प्रारंभ हो जायेगा। इस प्रकार तार पर दो बिन्दु सम्भव है।

1. जिस बिन्दु पर विस्थापन शून्य हो उसे नोड (N) कहते हैं।

* ध्वनि – एन सुब्रमणियम, ब्रिजला, विकास पब्लिसिंग हाउस प्रा. लि.

* ध्वनि तरंग एवं दोलन – डी. के. त्यागी, डी. सी. त्यागी, जय प्रकाश नाथ एण्ड कं., मेरठ

$$n = \frac{1}{2l}\sqrt{\frac{T}{m}}$$

where l = length of wire

वाद्य यंत्रों में ध्वनि के वैज्ञानिक सिद्धांतों का वर्णन

भौतिक विज्ञान में ध्वनि की परिभाषाऐं :–

प्रत्येक ध्वनि किसी वस्तु के यांत्रिक कम्पन से उत्पन्न होती है। अर्थात् प्रत्येक कम्पन वाली वस्तु कम्पन करने वाली वस्तु होती है। उदाहरण के लिये वायलिन या सितार के तने तार को बजाने से ध्वनि उत्पन्न होती है।

किसी भी प्रकार की ध्वनि को उत्पादन का पूर्ण अध्ययन करने के लिये वस्तुओं के कम्पन का पूर्ण अध्ययन करना है; जिसके लिये वस्तुओं की आर्वत गति और सरल आर्वत गति का अध्ययन करेंगे [1]। जो निम्न है।

तार पर हॉरमोनिक ओवरटोन :–

यदि किसी तार के दोनों सिरों को किसी वस्तु में क्लेम्प करके बीच में लम्बवत् खींचा जाता है तब तार एक निश्चित आवृति में कम्पन करने लगती है। यदि

T - तार पर लगाया गया बल -

m - तार के इकाई लम्बाई का द्रव्यमान

t - कम्पन में लगा समय

तब तार की आवृत्ति $n = \frac{1}{2t}\sqrt{\frac{T}{m}}$

उपरोक्त तार के कम्पन में तार के दोनों सिरे तो स्थिर रहेंगे किन्तु तार के बीच के सिरों में कम्पन प्रारंभ हो जायेगा। इस प्रकार तार पर दो बिन्दु सम्भव है।

1. जिस बिन्दु पर विस्थापन शून्य हो उसे नोड (N) कहते हैं।

* ध्वनि – एन सुब्रमणियम, ब्रिजला, विकास पब्लिसिंग हाउस प्रा. लि.

* ध्वनि तरंग एवं दोलन – डी. के. त्यागी, डी. सी. त्यागी, जय प्रकाश नाथ एण्ड कं.; मेरठ

2. जिस बिन्दु पर विस्थापन अधिकतम हो उसे एन्टी नोड (A) कहते हैं।

इस प्रकार के कंपन से तार के द्वारा जो टोन उत्पन्न होती है उसे ओव्हर टोन कहते हैं इस ओव्हर टोन की आवृत्ति का अनुपात 1:2:3 आदि में होगा। तब ये सनांदी श्रेणी टोन का रुप ले लेती है जिसे संनादी ओव्हर टोन या संनादी कहा जाता है।

इन कंपनों की पिच को श्री वसुन्धरा के अनुसार लिख सकते हैं।

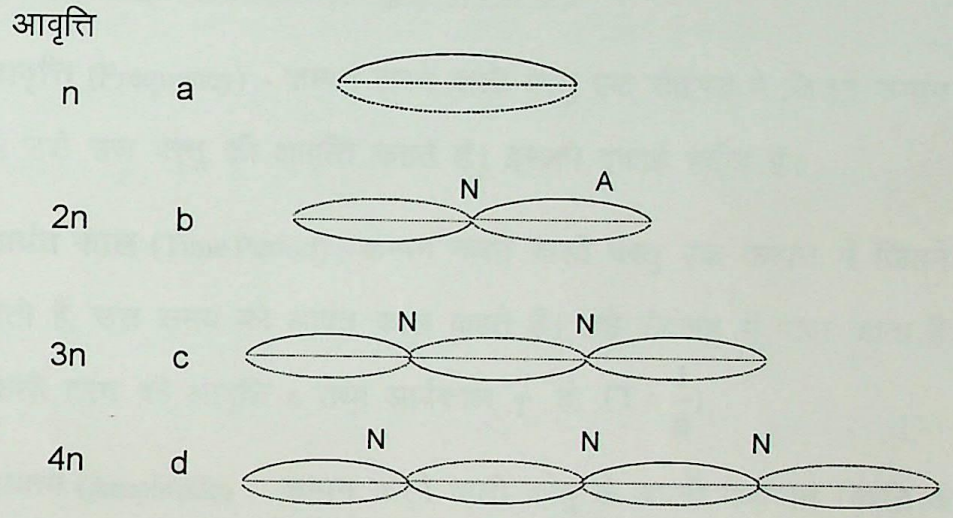

Overtones of A string.

चित्र–4

(i) **आर्वत गति या कम्पन** (Periodic Motion or Vibrations) :- जब कोई वस्तु इस प्रकार गति करती है कि एक निश्चित समय पश्चात बार–बार अपने मार्ग की पुनरावर्ती करती है तो उसकी गति को 'आर्वत गति' कहते हैं और किसी वस्तु के अपनी एक निश्चित स्थिति के दोनों ओर इधर–उधर गति करने को 'कम्पन' कहते हैं तथा यह कम्पन यदि आर्वत हो तो उसे 'आर्वत कम्पन' कहते हैं। जैसे किसी तने तार को हाथ से बजाने

---

* ध्वनि तरंग एवं दोलन – डी. के. त्यागी, डी. सी. त्यागी, जय प्रकाश नाथ एण्ड कं.; मेरठ

पर माध्य स्थिति के इधर उधर आर्वत गति आदि।

(ii) **सरल आर्वत गति**[12] (Simple Harmonic Motion) :- आर्वत गति का सबसे सरल व मूल रूप सरल आर्वत गति है। सरल आर्वत गति के लिये निम्न प्रतिबन्ध होते हैं।

1. गति एक सरल रेखा में अपनी माध्य स्थिति से इधर–उधर हो।
2. किसी भी समय सरल आर्वत गति करती हुई वस्तु पर कार्य करने वाला त्वरण उस समय वस्तु के माध्य स्थित से विस्थापन के समानुपाती होता है।

कम्पन करती वस्तु के सम्बन्ध में कुछ परिभाषायें[13] :–

1. **आवृत्ति** (Frequency) :- कम्पन करने वाली वस्तु एक सैकेण्ड में जितने कम्पन करती है; उसे उस वस्तु की आवृत्ति कहते हैं। इसकी इकाई हर्ट्ज है।

2. **आर्वत काल** (Time Period) :-कम्पन करने वाली वस्तु एक कम्पन में जितने समय लेती है; उस समय को आर्वत काल कहते हैं। इसे सैकेण्ड में मापा जाता है। यदि किसी तरंग की आवृत्ति n तथा आर्वकाल T हो $(\mathbf{T} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{n}})$

3. **आयाम** (Amplitude) :- कम्पन करने वाली वस्तु के अपनी मध्यमान स्थिति के दोनों ओर अधिकतम विस्थापन को कम्पन का आयाम कहते हैं।

4. **कला** (Phase) :- जब कोई वस्तु कम्पन करती है तो उसकी दिशा व स्थिति हर समय समान नहीं रहती बल्कि बदलती रहती है। कला से उस वस्तु की स्थिति व दिशा का पता चलता है।

5. **तरंग दैर्ध्य** (Wave length) :- माध्यम के किसी भी कण को कम्पन करने में जितना समय लगता है; उतने समय में तरंग द्वारा तय की गई दूरी को तरंग दैर्ध्य कहते हैं।

सरल आर्वत गति कर रहे कण का आर्वत काल और आवृत्ति[12] :–

सरल आर्वत गति कण का आर्वत काल, $T = 2\pi\sqrt{\frac{\text{विस्थापन}}{\text{त्वरण}}}$

सरल आर्वत गति कण की आवृत्ति, $\mathbf{n} = \frac{1}{T} = \frac{1}{2\pi}\sqrt{\frac{\text{त्वरण}}{\text{विस्थापन}}}$

ध्वनि का माध्यम में संचरण :– ध्वनि ऊर्जा का संचरण माध्यम में होने के लिये निम्न गुण होना चाहिये।

1. **प्रत्यास्थता** (Elasticity) :- माध्यम में प्रत्यास्थता का गुण होना आवश्यक है; जिससे माध्यम के कणों को उनकी विराम स्थिति से विस्थापित करके स्वतन्त्र कर देने पर उनके अन्दर प्रत्यानन बल उत्पन्न हो जाय जो उनको अपनी पूर्व अवस्था की ओर ला सके।

2. **जड़त्व** (Inertia) :- माध्यम में अपने अन्दर गतिज और स्थितिज ऊर्जा को एकत्रित कर सकने (अर्थात जड़त्व) का गुण होना चाहिये; जिससे माध्यम के कण को प्रदान की गई हलचल एक कण से दूसरे कण पर, दूसरे से तीसरे पर संचरित होती चली जाये और अन्त में माध्यम के सभी कणों में कम्पन होने लगे।

3. **माध्यम का प्रतिरोध कम** :- जिस माध्यम में तरंग गति हो रही है; उसका स्वयं का प्रतिरोध बहुत अधिक नहीं होना चाहिये नहीं तो माध्यम के कणों में कम्पन आयाम बहुत कम हो जायेंगे।

ध्वनि का विश्लेषण :- किसी मिश्रित ध्वनि में भिन्न–भिन्न सरल आर्वत ध्वनियों का मिश्रण होता है। किसी मिश्रित ध्वनि में उपस्थित अव्यवी सरल आर्वत ध्वनियों का पता लगाने तथा उन अव्यवों के आपेक्षित शक्ति एवं कला ज्ञात करने की प्रक्रिया को 'ध्वनि का विश्लेषण' कहते हैं।

ध्वनि के विश्लेषण की निम्न विधियां हैं।

(1) <u>कान द्वारा (By the Ear) ध्वनि विश्लेषण</u>[12] :-

मनुष्य के कान में एक मिश्रित ध्वनि को विश्लेषित करने का बहुत विशेष गुण होता है। ओह्म के नियम के अनुसार हवा में प्रत्येक सरल आर्वत गति को कान सरल स्वर के रूप में ग्रहण करता है और शेष सभी स्वरों को कान एक सरल स्वर की श्रेणी के रूप

में विश्लेषित कर देता है। यह नियम सभी ध्वनियों पर लागू होता है। इस प्रकार कान द्वारा एक मिश्रित ध्वनि में उपस्थित सरल स्वरों की संख्या एवं उनकी आपेक्षिक तीव्रताओं का भी पता चल जाता है। साथ ही साथ कोई–कोई कान किसी मिश्रित ध्वनि में से किसी विशेष स्वर की अलग पहचान कर लेता है। उदाहरणार्थ यदि किसी हारमोनियम से 'सा' (Sa) स्वर के बाद 'गा' (Ga) स्वर उत्पन्न किया जाता है तो सुग्राही कान द्वारा 'गा' स्वर के साथ भी 'सा' सुना जा सकता है।

कान द्वारा ध्वनि के विश्लेषण की निम्न सीमायें होती है।

(I) कान द्वारा किसी स्वर के विश्लेषण के लिये स्वर की तीव्रता कम से कम इतनी होनी चाहिये कि वह कान द्वारा सुनी जा सके।

(II) कान द्वारा उन स्वरों का विश्लेषण नहीं हो सकता; जिनकी आवृत्तियों में अन्तर काफी कम हो। इस अवस्था में यदि दो स्वर होंगे तो उनके अध्यारोपण से संकट (Beats) बन जाते है और यदि कई स्वर होगें तो उनके मिश्रण से एक अस्पष्ट ध्वनि उत्पन्न होती है।

(2) **अनुनाद द्वारा (By Resonators) ध्वनि विश्लेषण**[13] :-

कोई भी गैस स्तम्भ जिसकी अपनी एक स्वाभाविक आवृत्ति होती है एक 'अनुनादक' कहलाता है। हेल्म्होल्टज ने सर्वप्रथम अनुवादको का मिश्रित ध्वनि के विश्लेषण के लिये प्रयोग किया। जैसा कि चित्र में प्रदर्शित है; ये अनुवादक आकृति मे गोल या बेलनाकार होते है; जिनमें एक सिरे B पर चौड़ी गर्दन होती है। इन अनुनादको का अनुनाद नलिकाओं के स्थान पर प्रयोग किया जाता है क्योंकि इनमें अनुनाद अपेक्षाकृत अधिक तीक्ष्ण होता है। इन अनुनादकों द्वारा पता लगाया जा सकता है कि किसी मिश्रित ध्वनि में अनुनादक को स्वाभाविक आवृत्ति के बराबर आवृत्ति का स्वर उपस्थित है या नहीं। इस काय

$$n = \frac{1}{T} = \frac{c}{2\pi}\sqrt{\frac{a}{lV}}$$

Where l = length of the neck

V = Volume

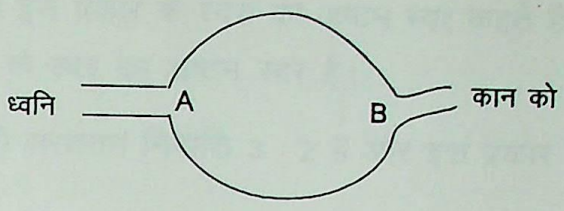

चित्र–5

के लिये ध्वनि श्रोत को अनुनादक के मुख पर बजाया जाता है; जिसकी गर्दन को कान या अन्य यंत्र से जोड़ दिया जाता है।

ध्वनि की तरंगदैर्य अधिक होने के कारण अनुनादक की गर्दन में हवा के कण एक ठोस पिस्टन की तरह कम्पन करते हैं। अनुनादक की गर्दन में हवा के पिस्टन के आगे पीछे कम्पन से अनुनादक को हवा में संपीडन तथा विरलन बनते हैं। माना अनुनादक मे हवा का आयतन v तथा गर्दन का अनुप्रस्थ परिच्छेद a और लम्बाई ℓ है और गर्दन की हवा आगे की ओर x दूरी विस्थापित होती है। तब अनुनादक की स्वाभाविक आवृत्ति

$$\eta = \frac{1}{T} = \frac{c}{2\pi}\sqrt{\frac{a}{\lambda v}}$$

जहां $c = \sqrt{\frac{v}{\rho}}$ $\rho =$ वायु का घनत्व

$$\nu = \frac{c_p}{c_v} = \frac{\text{स्थिर दाब पर गैस की विशिष्ट उष्मा}}{\text{स्थिर आयतन पर गैस की विशिष्ट उष्मा}}$$

<u>स्वरान्तराल</u> [13]:– जब दो ध्वनि स्वर एक साथ या एक के बाद एक करके उत्पन्न किये जाते है तो उनके बीच मे सदैव संगीतिक सम्बन्ध होता है। दो स्वरों के बीच संगीतिक संबंध को अंतराल कहते हैं .और इसको दोनों स्वरों की आवृत्तियों को निष्पत्ति से नापते हैं। उदाहरणार्थ यदि दो ध्वनि स्वरों की आवृत्तियाँ n_1 व n_2 है तो उनके बीच

$$\text{स्वरान्तराल} = \frac{n_1}{n_2} \text{ जबकि } n_2 \angle n_1$$

<u>स्वरान्तरालो का नामकरण</u> :– आवृत्ति निष्पत्ति की सरलता के अनुसार सात स्वरान्तराल सामान्यतः प्रयुक्त किये जाते हैं। बराबर आवृत्तियों के बाद दो स्वरों की आवृत्तियों की सबसे

सरल निष्पत्ति 2:1 है। इस प्रकार के स्वरों को अष्टम स्वर कहते है। इस प्रकार 200 आवृत्ति के स्वर 100 आवृत्ति के स्वर का अष्टम स्वर है।

अगली सरलतम निष्पत्ति 3 : 2 है और इस प्रकार के स्वर 'पंचम' कहे जाते हैं।

इसी प्रकार चतुर्थ 4:3 निष्पत्ति के लिये, दीर्घ तृतीय 5:4 निष्पत्ति के लिये, लघु तृतीय 6 : 5 निष्पत्ति के लिये इत्यादि।

निम्न सारणी कुछ प्रमुख स्वरान्तरालों को प्रदर्शित करती है।

तालिका–1

स्वरान्तराल		आवृत्ति निष्पत्ति
(Musical Interval)		**(Frequency Ratio)**
स्वरैक्य	(Unision)	1 : 1
अष्टम	(Octuave)	2 : 1
पंचम	(Fifth)	3 : 2
चतुर्थ	(Fourth)	4 : 3
दीर्घ तृतीय	(Major third)	5 : 4
लघु तृतीय	(Minor third)	6 : 5
दीर्घ षष्टम	(Major Sixth)	5 : 3
लघु षष्टम	(Minor Sixth)	8 : 5
दीर्घ सप्तम	(Major Seventh)	9 : 5
दीर्घ स्वरक	(Major tune)	16 : 9
अर्द्ध टोन	(Semi tune)	16 : 15
	Diesis	25 : 24
	Comma	81 : 80

स्वरान्तरालों का गणितीय अध्ययन :– माना A, B और C तीन संगीतिक स्वर हैं; जिनकी आवृत्तियाँ क्रमशः n_1, n_2 और n_3 है जहाँ $n_1 < n_2 > n_3$ तब B और A के बीच स्वरान्तराल n_2/n_1, B और C के बीच n_3/n_2 और C और A के बीच n_3/n_1 है। अब यदि पहले दो स्वरान्तरालों को परस्पर गुणा करे तो हमे तीसरे अन्तराल का मान ज्ञात हो जाता है।

अतः $\frac{n_2}{n_1} \times \frac{n_3}{n_2} = \frac{n_3}{n_1}$

इसी प्रकार यदि हम C और B के स्वरान्तराल को B और A के स्वरान्तराल में जोड़ दें तो हमें C और A का अन्तराल प्राप्त हो जाता है।

अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि दो अन्तरालो का योग ज्ञात करने के लिये उनकी आवृत्ति निष्पत्ति को परस्पर गुणा करना पड़ता है।

लघु तृतीय + दीर्घ तृतीय $= \frac{6}{5} \times \frac{5}{4} = \frac{3}{2} =$ पंचम

पंचम + चतुर्थ $= \frac{3}{2} \times \frac{4}{3} = \frac{2}{1} =$ अष्टम

अतः दो अन्तरालों को जिनकी आवृत्ति निष्पत्तियाँ $\frac{m}{n}$ और $\frac{m^1}{n^1}$, जोड़ने पर जो अन्तराल प्राप्त होता है; उसकी आवृत्ति निष्पत्ति $\frac{mm^1}{nn^1}$ होती है।

इसी प्रकार दो अन्तरालों के बीच अन्तर = दोनों की आवृत्ति निष्पत्तियों का अनुपात।

उदाहरणार्थ चतुर्थ – दीर्घ तृतीय $= \frac{4}{3} \div \frac{5}{4} = \frac{16}{15}$

किसी अन्तराल का कोई गुणक ज्ञात करने के लिये आवृत्ति निष्पत्ति पर संगत घात चढ़ायी जाती है उदाहरणार्थ किसी अष्टम का दुगना $= \left(\frac{2}{1}\right)^2$ और कॉमा (Comma) का $\frac{1}{11}$ वाँ भाग $= \left(\frac{81}{80}\right)^{1/11}$

संवादिता और असंवादिता :– जब विभिन्न आवृत्तियों के दो या दो से अधिक स्वरों को एक साथ उत्पन्न किया जाता है तो उनका संयोग स्वर 'सघांत' (Chord) कहलाता है। यदि कोई स्वर सघांत कान पर सुखदायी प्रभाव उत्पन्न करता है तो उसे 'सुरगति' (Concord) तथा यदि कोई स्वर सघांत कान पर भद्दा प्रभाव उत्पन्न करता है तो उसे 'विसंगगति' (Discord) कहते हैं। जब एक स्वर सघांत से कान पर सुखदायी प्रभाव उत्पन्न होता है तो उसे 'संवादिता' (Consonance) कहते हैं। इससे विपरीत किसी स्वर सघांत से कान पर अप्रिय प्रभाव उत्पन्न करने पर उसे 'असंवादिता' (Dissonance) कहते हैं।

यदि दो स्वर एक साथ बजने पर कान पर सुखदायी प्रभाव उत्पन्न करते हैं तो उनकी आवृत्तियों को निष्पत्ति पूर्णांक था कम होती है और जितनी उनकी आवृत्तियों की निष्पत्ति कम होती है उतनी संवादिता अधिक होती है।

कुछ प्रमुख अन्तरालों की संवादिता[13]

हम कुछ प्रमुख स्वरान्तरालों के बीच आपेक्षिक संवादिता का अध्ययन करते हैं। इसके लिये माना कि

(i) दोनों स्वरों में से प्रत्येक में मूल (foundamental) और अधिस्वरक (over tones) एक संनादि श्रेणी (Harmonic Series) बनाते हैं।

(ii) प्रत्येक स्वर में उसके अधिस्वरको (over tones) की पूरी श्रेणी होती है।

(iii) षष्टम से ऊँचे सनांदि बहुत क्षीण होते हैं और उनकी उपेक्षा की जाती है।

(iv) सयुक्त स्वरों (Combinational tones) का प्रभाव गणना में नहीं लिया जाता।

(1) स्वरैक्म (Unision) (1:1)

प्रथम स्वर	n	2n	3n	4n	5n	6n
द्वितीय स्वर	n	2n	3n	4n	5n	6n

प्रथम स्वर का कोई भी संवादी द्वितीय स्वर के संगत संवादि के बराबर होता है। अतः इस स्थिति में कोई विस्पन्द (Beat) नहीं उत्पन्न होते हैं। दोनों स्वरों के अध्यारोपण से केवल उनके संनादियों को तीव्र करते हैं। अतः स्वरैक्य सबके संवादी अन्तराल (Consonant Interval) हैं।

(2) अष्टम (Octural) (2:1)

निम्न स्वर	(n)	2n	3n	4n	5n	6n		
द्वितीय स्वर	(n)	2n		4n		6n	8n	10n

ऊपर के स्वर के सभी संनादी स्वर (hormonics) नीचे के एकान्तर संनादियों से मिलते हैं। अतः उच्च स्वर में कोई भी ऐसी आवृत्ति नही सम्मिलित करता; जो निम्न स्वर में न हो। अतः यहाँ भी विस्पन्द नहीं उत्पन्न होते और ध्वनि में रूखापन नहीं होता।

(3) पंचम (3:2)

प्रथम स्वर (निम्न स्वर)	2	4	6	8	10	12		
द्वितीय स्वर (उच्च स्वर)	3		6	9		12	15	8

यहाँ संवादिता उतनी अच्छी नहीं है क्योंकि द्वितीय स्वर की तृतीय आवृत्ति प्रथम स्वर की चौथी तथा पाँचवी आवृत्ति के विस्पन्द दूरी पर है। यह अन्तराल 9/8, 10/9 कुछ ककर्श स्वर उत्पन्न करता है पर यह अन्तराल अर्द्ध स्वरांतराल (16/15) जो कि अधिकतम कर्कश है, से अधिक है। अतः पंचम जो पूर्ण नहीं है पर अच्छी सुरंगति उत्पन्न करती है।

(4) चतुर्थ (4:3)

प्रथम स्वर (निम्न स्वर)	3	6	9	12	15	18		
द्वितीय स्वर (उच्च स्वर)	4	8		12	16	20	24	

यह सुरंगति का निम्न प्रकार है। यहाँ पर असंवादि अन्तराल 9/8 दीर्घ स्वर 20/18=10/9 लघु स्वर 18/16=9/8 दीर्घ स्वर के अलावा द्वितीय स्वर के चौथे संनादि प्रथम स्वर के पचंम के साथ अर्द्ध स्वरांतराल उत्पन्न कर रहा है।

(5) दीर्घ तृतीय (5:4)

प्रथम स्वर	4	8	12	16	20	24	
द्वितीय स्वर	5	10	15	20	25	30	

इसमें एक अर्द्ध स्वर (16/15) निम्न के चतुर्थ तथा उच्च के तृतीय के मध्य है। तथा दूसरा (25/24) जो अर्द्ध स्वर निम्न के छठवें तथा उच्च के पांचवे के मध्य है और यह दोनों प्रथम छः संनादि के भीतर ही हैं।

अतः इन दोनों विस्पन्द के कारण अत्यधिक असंवादिता उत्पन्न होती है। उच्च के द्वितीय अधिस्वर का निम्न के द्वितीय तथा तृतीय से दूरी के कारण विस्पन्दता उत्पन्न नही होता है।

(6) लघु तृतीय (6:5)

प्रथम स्वर	5	10	15	20	25	30
द्वितीय स्वर	6	12	18	24	30	36

लघु तृतीय बहुत कुछ दीर्घ तृतीय के समान है। निम्न स्वर के चतुर्थ संवादि उच्च स्वर के तृतीय से स्वर दूरी पर है जबकि दीर्घ तृतीय में यहाँ पर अर्द्ध स्वर था। दूसरी और 25/24 का अंतराल (लगभग अर्द्ध स्वर) श्रेणी में एक कदम पीछे है। दीर्घ और लघु तृतीय के गुणों में अन्तर अलग–अलग स्वरों को उपस्थिति पर आधारित है।

(7) अर्द्ध स्वर (16:15)

प्रथम स्वर (निम्न स्वर)	15	30	45	60	75	92
द्वितीय स्वर (उच्च स्वर)	16	32	48	64	80	92

द्वितीय स्वर की प्रत्येक आवृत्ति प्रथम स्वर की तुलनात्मक आवृत्ति के अर्द्ध स्वर से अधिक है। अतः छः आवृत्ति पर छः अर्द्ध स्वर हैं। इस तरह अधिकतम असंवादिता होती है।

द्विटोनी स्वरग्राम[12]

(Diatonic Scale)

यदि कानो को सुखदायी और भली प्रतीत होने वाली आवृत्तियों को कुछ स्वर निष्पत्ति (Intervals) के साथ आठ स्वरों की एक श्रेणी में इस प्रकार व्यवस्थित किया जाय कि आठवे स्वर की आवृत्ति पहले स्वर की आवृत्ति से दुगनी हो, तो इस अष्टम के बीच इन श्रेणी क्रम आवृत्तियों को स्वर ग्राम (Musical Scale) कहते हैं।

सामान्यतः प्रचलित स्वरग्राम को स्वर सप्तक तथा पाश्चात्य संगीत में द्विटोनी स्वरग्राम (Diatonic Scale) कहते हैं। द्विटोनी स्वरग्राम के अष्टम की आवृत्तियाँ उनके बीच की निष्पत्ति, उनके नाम और संकेत सारणी के रूप में प्रकट किये गये हैं।

---

* A text book of sound, D. R. Khanna, R. S. Bedi, Atmaram & Sons, Delhi Lucknow.

तालिका–2

भारतीय नाम	सा	रे	गा	मा	पा	धा	नि	सा
पाश्चात्य नाम	डो (Doh)	रे (Ray)	मी (Me)	फा (Pah)	सो (Soh)	ला (Lah)	टि (Te)	डो (Doh)
संकेत	C	D	E	F	G	A	B	C
आवृत्तियां	256	288	230	$341^1/_3$	384	$426^3/_2$	480	512
आपेक्षिक आवृत्ति	24	27	30	32	36	40	45	48
C की आवृत्ति से निष्पत्ति	1	9/8	5/4	4/3	3/2	5/3	15/8	2
उत्तरोत्तर आवृत्तियों की निष्पत्ति या अन्तराल		9/8	10/9	16/15	9/8	10/9	9/8	16/15

यदि स की आवृत्ति 256 लिया जाता है तब इसके साथ 264 तक की आवृत्ति कानो को सुनाई देती है इसी तरह स्वरों के लिये निम्नानुसार स्वर होंगे।

1. 256 288 320 341.3 384 426.7 480 512

2. 264 297 330 352 396 440 495 528

यदि श्रेणी 1 स्वर पदों को स (मूल स्वर) की आवृत्ति (256) से भाग देने पर

$$\frac{256}{256} \quad \frac{288}{256} \quad \frac{320}{256} \quad \frac{341.3}{256} \quad \frac{384}{256} \quad \frac{426.7}{256} \quad \frac{480}{256} \quad \frac{512}{256}$$

(3) $1 \quad 9/8 \quad 5/4 \quad 4/3 \quad 3/2 \quad 5/3 \quad 15/8 \quad 2$

इसी प्रकार श्रेणी 2 में भी मूल स्वर स की आवृति 264 से क्रमानुसार भाग देने पर भी 3 की श्रेणी ही प्राप्त होती है; जिसमें प्रत्येक स की आवृति के पद के अनुपातिक हैं।

सा, रे, गा, मा आदि स्वरों को उनकी आवृत्तियों के बढ़ते क्रम मे रखने पर

	1	9/8	5/4	4/3	3/2	5/3	15/8	2
or	1	1.125	1.250	1.333	1.500	1.667	1.875	2

यदि पहले स्वर की आवृत्ति C जिसे tonic या मूल स्वर कहते है; उसे 24 लिया गया तब अलग अलग आवृत्तियों के स्वरों को द्विटोनी स्वर ग्राम में प्रदर्शित किया जाता है।

24	27	30	32	36	40	45	48
$\frac{9}{8}$	$\frac{10}{9}$	$\frac{16}{15}$	$\frac{9}{8}$	$\frac{10}{9}$	$\frac{9}{8}$	$\frac{16}{15}$	
(दीर्घ स्वर)	(लघु स्वर)	(अर्द्ध स्वर)	(दीर्घ स्वर)	(लघु स्वर)	(दीर्घ स्वर)	(अर्द्ध स्वर)	

अब यदि अगले स्वर की आवृत्ति को उसके पिछले स्वर की आवृत्ति से भाग देने पर हमें निम्न संस्थायें प्राप्त होती हैं। मूल स्वर 256 हैं जिन्हें इस प्रकार समझा जा सकता है।

सा	रे	गा	मा	पा	धा	नि	सा
256	288	320	341.3	384	426.7	480	512
$\frac{280}{256}$	$\frac{320}{288}$	$\frac{341.3}{320}$	$\frac{384}{341.3}$	$\frac{426.7}{384}$	$\frac{480}{426.7}$	$\frac{512}{480}$	
$\frac{9}{8}$	$\frac{10}{9}$	$\frac{16}{15}$	$\frac{9}{8}$	$\frac{10}{9}$	$\frac{9}{8}$	$\frac{16}{15}$	
(दीर्घ स्वर)	(लघु स्वर)	(अर्द्ध स्वर)	(दीर्घ स्वर)	(लघु स्वर)	(दीर्घ स्वर)	(अर्द्ध स्वर)	

इसी प्रकार हम इस स्केल में एक अष्टक की कमी या वृद्धि करके स्केल का दोनों दिशाओं में विस्तार कर सकते है। ऊपर के वितरण से स्पष्ट है कि द्विटोनी स्वर ग्राम में निम्न तीन प्रकार के अन्तराल उपस्थित होते हैं।

(i) दीर्घ स्वर (Major Tone) – जिनकी स्वर निष्पत्तियाँ 9/8 है।

(ii) लघु स्वर (Mainor Tone) – उत्तरोत्तर स्वर निष्पत्तियाँ 10/9 है।

(iii) अर्द्ध स्वर (Semi Tone) – जिनकी उत्तरोत्तर स्वर निष्पत्तियाँ 16/15 है।

इस स्वर ग्राम को दीर्घ द्विटोनी स्वर ग्राम कहते हैं।

द्विटोनी स्वर ग्राम के दोष – किसी भी संगीत स्वर ग्राम के पहले स्वर को उसका मूल स्वर कहते हैं। हारमोनियम तथा पियानों की तरह के वाद्यों में जिनमें विभिन्न नियत आवृत्तियों के स्वर

तालिका–3

उत्तरोत्तर स्वर निष्पत्ति		9/8	10/9	16/15	9/8	10/9	9/8	16/15
स्वर आवृत्ति	256	288	320	$341\frac{2}{3}$	384	$426\frac{2}{3}$	480	512

लगे होते है; उनके प्रयोगों में गायकों को यह कठिनाई होती है कि जब कोई गायक मूल स्वर को अपने गले के अनुसार बदलता है तो इसके लिये उसे नये स्वरों की आवश्यकता होती है; जो इस स्वर ग्राम में उपस्थित नहीं होते । उदाहरण के तौर पर C को मूल स्वर मान कर बनाये गये स्वरग्राम में तथा D को मूल स्वर मानकर बनाये गये स्वर ग्राम में उपस्थित स्वरों में अन्तर होता है। जैसे–

माना कि एक गायक 256 आवृत्ति अर्थात् को C मूल स्वर मानकर चलता है तो उसको संगीत स्वर ग्राम की निम्न आवृत्तियों की आवश्यकता होगी।

माना कि आवृत्तियों के स्वर उस वाद्य में लगे हुये हैं। अब यदि एक गायक के लिये 256 आवृत्ति का स्वर उसके गले के लिये काफी नीचा रह जाता है और वह माना 288 आवृत्ति को मूल स्वर मानकर चलता है तो उसके लिये आवश्यक स्वरों को आगे प्रदर्शित किया गया है।

तालिका–4

स्वर निष्पत्ति		9/8	10/9	15/16	9/8	10/9	9/8	19/15
स्वर आवृत्ति	288	324	360	384	432	480	540	576

इससे स्पष्ट है कि गायक को उस वाद्य में लगी हुई आवृत्तियों के अतिरिक्त 4 अन्य आवृत्तियों की आवश्यकता होगी। अतः इस कठिनाई को दूर करने की निम्न दो सम्भव विधियाँ हो सकती है।

(i) संगीत स्वरग्राम में इस प्रकार आवश्यक स्वरों की आवृत्तियाँ बढ़ाई जाये।

(ii) प्रत्येक गायक के लिये भिन्न भिन्न वाद्य बनाया जाये; जिसमें उसके गले के अनुसार आवश्यक स्वर विद्यमान हों। ये दोनों सम्भावनायें व्यावहारिक रूप से बड़ी कठिनाई ही नहीं बल्कि असम्भव है।

संस्कारित स्केल – (Tempered Scale) :– उपर्युक्त कठिनाई को दूर करने के लिये आजकल द्विटोनी स्वरग्राम को निष्पत्तियों में अन्तर करके इस प्रकार का स्केल बनाया गया; जो पूर्ण रूप से यथार्थ तो नहीं होता परन्तु जिसमें गायक को अपने गले के अनुसार किसी भी स्वर को मूल स्वर मानकर चलने पर उसके लिये आवश्यक लगभग स्वर आवृत्ति उस स्केल में मिल जाती है। इस प्रकार को संस्कारित स्वर ग्राम कहते हैं और इस परिवर्तन को संस्कार (Temperment) कहते हैं।

स्वर ग्राम का संस्कार[13] – (Temperament of a Scale) :– किसी स्वर ग्राम का संस्कार निम्न दो विधियों से किया जाता हैं।

(1) माध्यम स्वर संस्कार (Mean Tune Temperament) :– इस प्रकार के संस्कार में उत्तरोत्तर स्वरों की निष्पत्तियाँ दीर्घ और लघु स्वरों (9/8 और 10/9 के माध्य के बराबर ली जाती है।

अतः इस स्वर ग्राम में स्वर की निष्पत्ति

$$\left(\frac{10}{9} \times \frac{9}{8}\right) = \sqrt{\frac{5}{4}} = 1.118$$

अतः उत्तरोत्तर C से E के बीच तथा E से B के बीच स्वरों का अन्तराल $\sqrt{\frac{5}{4}}$ के बराबर होता है।

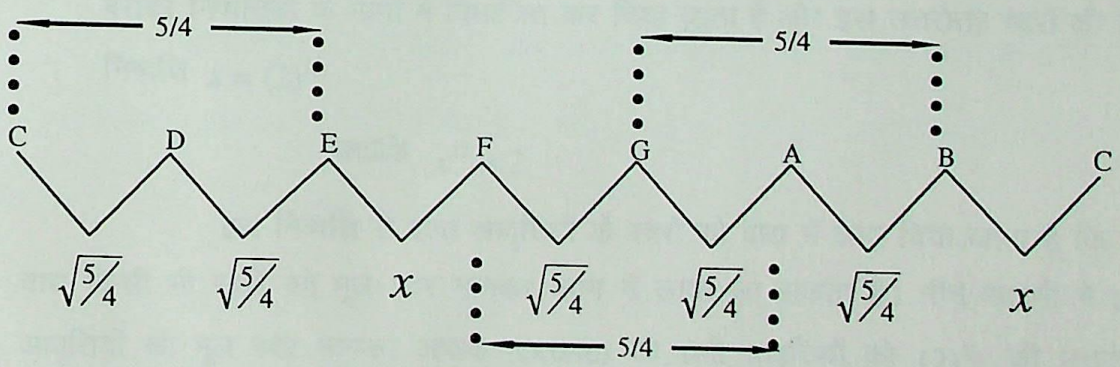

माध्य स्वर ग्राम को नीचे प्रदर्शित किया गया है।

अब क्योकि प्रथम और अन्तिम स्वर की निष्पत्ति (1 : 2) है, अतः उत्तरोत्तर अन्तरालों की गुना, 2 के बराबर होती है।

$$\sqrt{\frac{5}{4}}.\sqrt{\frac{5}{4}}.x\sqrt{\frac{5}{4}}.\sqrt{\frac{5}{4}}.\sqrt{\frac{5}{4}}.x = 2$$

$$\left(\frac{5}{4}\right)^{5/2} x^2 = 2$$

$$x^2 = 2\left(\frac{4}{5}\right)^{5/2}$$

लघुगुणक के द्वारा x का मान ज्ञात करने पर x = 1.07 । अतः माध्य स्वर संस्कारित स्वर ग्राम में केवल दो अन्तराल होते हैं एक 1.118 और 1.07 और यह स्वर ग्राम निम्न रूप में प्रदर्शित किया जाता है।

तालिका–5

स्वर	C	D	E	F	G	A	B	C
C से आवृत्ति निष्पत्ति	1	1.118	1.250	1.337	1.497	1.673	1.869	2.00
C से अन्तराल	0	193	368	503	697	890	1083	1200

(i) समान स्वर संस्कार (Equal Tune Temperament) :- इसमें एक अष्टक (Octare) को 12 बराबर निष्पत्तियों के भागों में विभाजित कर दिया जाता है और इस उत्तरोत्तर स्वरों की स्वर निष्पत्ति $x = (2)^{1/12}$

क्योंकि $x^{12} = 2$

इस निष्पत्ति से प्राप्त आवृत्तियों के स्वरों को वाद्य में लगा दिया जाता है कि यह वाद्य किसी भी स्वरों को मूल स्वर मानकर काम में लाया जा सकता है। नीचे सारणी में 256 आवृत्तियों को मूल स्वर मानकर अष्टक (Octave) की सभी आवृत्तियों को $(2)^{1/12}$ की उत्तरोत्तर निष्पत्ति कर दिया गया है।

तालिका–6

C	C+	D	D+	E	F	F+
256	271	287.4	304.5	322.5	341.7	362
	G	G+	A	A+	B	C
	383.5	406.5	430.5	456	483.5	512

ऊपर की सारणी का अध्ययन करने पर पता चलता है कि यहाँ 256 स्वर को मूल स्वर मानकर तथा 288 को मूल स्वर मानकर आवश्यक आवृत्तियाँ द्विटोनी स्वर ग्राम के अनुसार लगभग सभी स्वर मिल जाते हैं। इस प्रकार एक ही वाद्य सभी गायकों के लिये काम में लाया जा सकते हैं।

यहाँ अष्टक के आठ स्वरों के बीच पाँच स्वर और बढ़ाकर 13 स्वरों का स्वर ग्राम बन जाता है। इन नये पाँच स्वरो को व्यक्त करने के तीव्र (Sharp) या कोमल (Soft) शब्दों का प्रयोग किया जाता है। जैसे 271 आवृत्ति के स्वर को C+ (Sharp) इत्यादि कहते हैं।

हार्मोनियम और पियानो में इसी प्रकार का द्विटोनी स्वर ग्राम प्रयुक्त किया जाता है। हार्मोनियम में एक अष्टक में श्वेत तथा बीच में 5 काली कुंजिया तीन आवृत्तियों के लिये होती है।

स्वरों का वैदिक वर्णन आगे प्रदर्शित किया गया है।

******

स्वरों का वर्गीकरण

नारद पुराण के अनुसार संगीत शास्त्र में सात स्वर तीन ग्राम 21 मूर्च्छनायें तथा 49 ताल होते हैं; यही स्वरमण्डल कहा जाता है।

सप्त स्वरास्त्रयोग्रामा मूर्छनास्त्वेकर्विशतिः। तालाश्रेकोनपञ्चाशदित्येतत्स्वरमण्डलम्[14]। ३६

षड्जर्षभौ च गान्धारो मध्यमः पञ्चमस्तथा। धैवतश्रापि विज्ञेयस्तथा चापि निषादवान्॥३७

1. **स्वरो के नामः** – साम गान करने वाले विद्वान प्रथम (षड्ज) द्वितीय (ऋषभ), तृतीय (गान्धार), चतुर्थ (मध्यम), मण्ड (पंच्चम), कुष्ट (धैवत) तथा अतिस्वार (निषाद) – इन सातों स्वरों का प्रयोग करते है; द्वितीय और प्रथम में ताण्डी (ताण्डम–पञ्चविशादि ब्राह्मण के अध्येता कौथुम आदि शाखा वाले) तथा माल्लवी (छन्दोग शाखा वाले) विद्वानों के स्वर हैं तथा शतपथ ब्राह्मण में आये हुये ये दोनों स्वर वाजसनेयी शाखा वालों के द्वारा भी प्रयुक्त होते हैं। ये सब वेदों में प्रयुक्त होने वाले स्वर विशेष रूप से बताये गये हैं। इस प्रकार सार्व–वैदिक स्वर–संचार कहा गया है। स्वर संचार अर्थात् छन्दोग विद्वान् साम गान में तथा ऋक्पाठ में जिन् स्वरों का उपयोग करते हैं।

षड्जर्षभगान्धार-मध्यम-पञ्चम-धैवत-निषादाःस्वरा[14]

गायत्र्यादिषु क्रमेण द्रष्टव्याः

अर्थात् गायत्री प्रभृति सात प्रकार के छन्दों के षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम पञ्चम, धैवत और निषाद ये सात स्वर क्रमशः होते हैं। गायत्री का षड्ज, उष्णिक् का ऋषभ, अनुष्टुप् का गान्धार, बृहती का मध्यम, पंक्ति का पञ्चम, त्रिष्टुप् का धैवत और जगती का निषाद स्वर होता है। (तालिका – 7)

तालिका–7

स्वर के नाम	गायत्री प्रभृति
षड्ज	गायत्री
ऋषभ	उष्णिक्
गान्धार	अनुष्टुप्
मध्यम	वृहती
पञ्चम	पक्ति
धैवत	त्रिष्टुप्
निषाद	जगती

तालिका–8 "अ"

स्वर के नाम	स्वर उत्पन्न होने का स्थान
षड्ज	भूर्लोक
ऋषभ	भूवर्लोक
गान्धार	स्वर्ग एवं मेघलोक
मध्यम	–
पञ्चम	–
धैवत	–
निषाद	–

2. **स्वरों में ग्राम** – षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धवैत तथा निषाद ये सात स्वर हैं। षड्ज, मध्यम और गान्धार को ग्राम कहा गया है। भूर्लोक से षड्ज उत्पन्न होता है। भुवर्लोक से मध्यम प्रकट होता है तथा स्वर्ग एवं मेघलोक से गान्धार प्राकट्य होता है। ये तीन ही ग्राम स्थान है। (तालिका–8) स्वरों के राग विशेष से ग्रामों के विविध राग कहे गये हैं। सामगान करने वाले विद्वान मध्यम ग्राम में बीस, षड्ज ग्राम में चौदह तथा गान्धार ग्राम में पन्द्रह तान स्वर होते हैं। ग्राम के ही स्वरों का आरोह अवरोह करने से मूर्च्छना बनती है। ग्राम के स्वरों पर मूर्च्छना आधारित है।

3. **देवताओं की मूर्च्छनाऐं** – नन्दी, विशाला, सुमुखी, चित्रा, चित्रवती, सुखा तथा बला को देवताओं की सात मूर्च्छनाओं के नाम से जानते हैं। (तालिका – 9)

4. **ऋषियों की मूर्च्छनाऐं**[14] – ऋषियों की सात मूर्च्छनाऐं होती हैं। पितरों की सात मूर्च्छताऐं षड्ज स्वर में उत्तरामन्दा, ऋषभ में अभिरूढ़ता (या अभिरूढ़ता) तथा गान्धार में अश्रवकान्ता नामवाली तीसरी मूर्च्छना मानी गयी है। मध्यम स्वर में सौवीरी, पञ्चम में हबिका तथा धैवत में उत्तरायता, निषाद स्वर में रजनी होती हैं। मरू देश में समउत्पन्न मूर्छना शुद्ध मध्यमा कही जाती है; इसमें शुद्ध स्वर मध्यम है; इनके अधिदेवता गंर्धव हैं सिद्धों का मार्ग दिखाते समय मृगों के साथ विचरण करने के कारण मूर्छना मार्गी नाम से प्रसिद्ध हुआ इसके अधिदेवता मृगेन्द्र हैं। (तालिका – 10)

मृगेः सह संचरते सिद्धानां मार्गदर्शने।

यस्मात्त स्मात्स्मृता मार्गी मृगोन्द्रोऽस्याश्र देवता।।54।।[14]

5. **पितरों की मूर्च्छनाऐं** – पितरों की सात मूर्च्छनाऐं होती हैं। षड्ज में आप्याथिनी, ऋषभ में विश्वभृता, गांधार में चन्द्रा, मध्यम में हेमा, पञ्चम मे कपर्दिनी, धैवत में मैत्री तथा निषाद मे वाहिती होती है। (तालिका – 11)

6. **स्वर का रंग**[14] – सितसारङ्ग पिराङ्ग कृष्णनीललोहित गौरा वर्णाः ।।65।।

षड्ज स्वर का रंग कमल पत्र के समान हरा है। ऋषभ स्वर तोते के समान कुछ पीलापन लिये हरे रंग का है। तथा गान्धार सुवर्ण के समान कान्तिवाला है। मध्यम स्वर कुन्द के सदृश श्वेत वर्ण का है। पञ्चम स्वर में सभी रंग श्याम हैं। धवैत को पीले रंग का माना गया है। निषाद स्वर में सभी रंग मिले हुये हैं । सात प्रकार ये सभी स्वरों के वर्ण कहे गये हैं। (तालिका–12)

7. **स्वरों की जाति** – स्वर पञ्चम, मध्यम और षड्ज तीनों स्वरों का ब्राह्मण माना गया है । ऋषभ और धैवत को क्षत्रीय तथा गान्धार और निषाद दोनों स्वर आधे वैश्य होते हैं। (तालिका–13)

तालिका–8 ''ब''

स्वर के नाम	स्वर के ग्राम में तान स्वर की संख्या
षड्ज	14
ऋषभ	–
गान्धार	15
मध्यम	20
पञ्चम	–
धैवत	–
निषाद	–

तालिका–9

स्वर के नाम	देवताओं की मूर्छनाऐं
षड्ज	नन्दी
ऋषभ	विशाला
गान्धार	सुमुखी
मध्यम	चित्रा
पञ्चम	चित्रवती
धैवत	सूखा
निषाद	वला

तालिका–10

स्वर के नाम	ऋषियों की मूर्छनाऐं
षड्ज	उत्तरमन्द्रा
ऋषभ	अचिरूढता या अभिरूद्रता
गान्धार	अश्वकान्ता
मध्यम	सौवीरा
पञ्चम	ह्रासिका
धैवत	उत्तरायता
निषाद	रजनी

तालिका–11

स्वर के नाम	पितरों की मूर्छनाऐं
षड्ज	आप्याथिनी
ऋषभ	विश्वभृता
गान्धार	चन्द्रा
मध्यम	हेमा
पञ्चम	कपर्दिनी
धैवत	मैत्री
निषाद	वाहिती

तालिका–12

स्वर के नाम	स्वर के रंग
षड्ज	कमल पत्र के समान हरा (पदम् दल की आभा)
ऋषभ	तोते के समान कुछ पीले पन लिये हुये हरे रंग का
गान्धार	सुवर्ण के समान कान्तिवाला
मध्यम	कुंद के सदृश स्वेत वर्ण का
पञ्चम	सभी रंग श्याम (कृष्ण)
धैवत	पीले रंग (पीत)
निषाद	सभी रंग मिले होते हैं।

तालिका–13

स्वर के नाम	स्वरों की जाति
षड्ज	ब्राह्मण
ऋषभ	क्षत्रीय
गान्धार	आधे वैश्य
मध्यम	ब्राह्मण
पञ्चम	ब्राह्मण
धैवत	क्षत्रीय
निषाद	आधे वैश्य

8. **पशुपक्षी के स्वर**[14] – मोर षड्ज स्वर में बोलता है। गायें ऋषभ स्वर में रंभाँती हैं, भेड़ और बकरियां गान्धार स्वर में बोलती हैं। तथा क्रौञ्च (कुरर) पक्षी मध्यम स्वर में बोलता है। जब साधारण रूप से सब प्रकार के फूल खिलने लगते हैं; उस बसन्त ऋतु में कोयल पञ्चम स्वर में बोलती है। घोड़ा धैवत स्वर में हिनहिनाता है और हाथी निषाद स्वर में चिंघाड़ता है। (तालिका–14)

9. **स्वर उठने के स्थान** – षड्ज स्वर कण्ठ से प्रकट होता है। ऋषभ मस्तक से, गान्धार का उच्चारण मुखसहित नासिका से, मध्यम स्वर हृदय से, पंचम स्वर का उत्थान छाती, सिर और कण्ठ से होता है। धवैत को ललाट से तथा निषाद का प्राकट्य सम्पूर्ण सन्धियों से होता है। (तालिका–15)

10. **स्वरों का नामकरण**[14] – षड्ज स्वर नासिका, कंठ, वक्षः स्थल, तालु, जिह्वा तथा दाँतों के आश्रित हैं। इन छः अङ्गों से उसका जन्म होता है। इसलिये उसे षड्ज कहा गया है।

नाभि से उठी हुई वायु कण्ठ और मस्तक से टकराकर वृषभ के समान गर्जना करती है। इसलिये उससे प्रकट हुये स्वर का नाम ऋषभ हैं। नाभि से उठी हुई वायु कण्ठ और सिर से टकराकर पवित्र गन्ध लिये हुए बहती है। इस कारण उसे 'गान्धार' कहते हैं।

नाभि से उठी हुई वायु ऊरू तथा हृदय से टकराकर नाभि स्थान में आकर मध्यवर्ती होती है । अतः उससे निकले हुये स्वर का नाम 'मध्यम' होता है।

नाभि से उठी हुई वायु वक्ष, हृदय, कण्ठ और सिर से टकराकर इन पांचों स्थानों से स्वर के साथ प्रकट होती है। इसलिये उस स्वर का नाम 'पञ्चम' रखा जाता है।

अन्य विद्वान धैवत और निषाद इन दो स्वरो को छोड़कर शेष पांच स्वरों को पाँचों स्थानों से प्रकट मानते हैं। पाँचों स्थानों में स्थित होने के कारण इन्हें सब स्थानों में धारण किया जाता है। (तालिका–16)

11. **स्वरों की अधिष्ठता देवता**[14] – षड्ज स्वर अग्नि क द्वारा गाया गया है। ऋषभ ब्रम्हाजी के द्वारा गाया कहा जाता है। गान्धार गान सोमने और मध्यम स्वर का गान विष्णु ने किया है। नारदजी ने पञ्चम स्वर का गान किया है। धैवत और निषाद इन दो स्वरों को तुम्बुरूने गाया है। (तालिका–17 "अ")

विद्वान पुरूषों ने ब्रम्हाजी को आदि षड्ज स्वर का देवता कहा है। ऋषभ का प्रकाश तोरवा और उद्दीप्त है। इसलिये अग्निदेव ही उसके देवता है। जिसके गान करने पर गौएं संतुष्ट होती है, वह गान्धार है और इसी कारण गौऐं ही उसकी अधिष्ठात्री देवी है। गान्धार को सुनकर गौऐं पात आती हैं, इसमें संदेह नहीं है। पञ्चम स्वर के देवता सोम है, जिन्हें ब्राम्हणों का राजा कहा गया है। (तालिका–17 "ब")

तालिका–14

स्वर के नाम	पशु पक्षी का स्वर
षड्ज	मोर का बोलना
ऋषभ	गाय का रंभाँना
गान्धार	भेड़ और बकरियाँ
मध्यम	क्रोञ्च (कुरर)
पञ्चम	कोयल का कूकना
धैवत	घोड़े का हिनहिनाना
निषाद	हाथी का चिंघाड़ना

तालिका–15

स्वर के नाम	स्वर उठने का स्थान
षड्ज	कंठ
ऋषभ	शिर (मस्तिष्क)
गान्धार	मुख सहित नासिका
मध्यम	हृदय
पञ्चम	छाती, सिर और कंठ
धैवत	ललाट
निषाद	सम्पूर्ण संधियों से

तालिका–16

स्वर के नाम	स्वर उत्पत्ति का स्थान
षड्ज	नासिका, कण्ठ, वक्षः स्थल, तालु, जिह्वा तथा दाँत
ऋषभ	नाभि से उठी हुई वायु कण्ठ और मस्तक से टकराने के कारण।
गान्धार	नाभि से उठी हुई वायु कण्ठ और सिर से टकराकर पवित्र गंध में बहने के कारण।
मध्यम	नाभि से उठी हुई वायु उरु तथा हृदय से टकराकर नाभि स्थान में आकर मध्यवर्ती होने के कारण।
पञ्चम	नाभि से उठी हुई वायु वक्षः हृदय, कंठ और सिर से टकराकर इन पाँचों स्थानों के एक साथ प्रकट होने के कारण।
धैवत	–
निषाद	–

तालिका–17 "अ"

स्वर के नाम	देवता के द्वारा गाया जाता है
षड्ज	अग्नि
ऋषभ	ब्रह्माजी
गान्धार	सोमदेव
मध्यम	विष्णु
पञ्चम	नारद
धैवत	तम्बरू
निषाद	तम्बरू

तालिका–17 "ब"

स्वर के नाम	अधिष्ठिता देवता
षड्ज	ब्रह्माजी
ऋषभ	अग्नि देव
गान्धार	गौऐं
मध्यम	विष्णु
पञ्चम	सोम
धैवत	सूर्य
निषाद	सूर्य

जैसे चन्द्रमा शुक्लपक्ष में बढ़ता है और कृष्णपक्ष में घटता है, उसी प्रकार स्वरग्राम में प्राप्त होने पर जिस स्वर का प्राप्त होता और कृष्णपक्ष में घटता है। उसी प्रकार स्वरग्राम में प्राप्त होने पर जिस स्वर का ह्रास होता और वृद्धि होती है तथा इन पूर्वोत्पन्न स्वरों की जहाँ अतिसंधि होती है, वह धैवत है। इसी से उसके धैवतत्व का विधान किया गया है। निषाद में सब स्वरों का निषादन (अन्तर्भाव) होता है, इसलिये वह निषाद कहलाता है। यह सब स्वरों को अभिभूत कर लेता है– ठीक उसी तरह, जैसे सूर्य सब नक्षत्रों को अभिभूत करता है क्योंकि सूर्य ही इसके अधिदेवता है।

12. **स्वर का स्थान**[14] – षड्ज स्वर का स्थान ललाट में है। द्वितीय (ऋषभ) स्वर का स्थान दोनों भौंहों के मध्य में है। गान्धार स्वर का स्थान दोनों कानों में है। मध्यम स्वर का स्थान कण्ठ है। पञ्चम स्वर का स्थान रसना बताया गया है और निषाद स्वर का स्थान हृदय में बताया गया है। (तालिका–18)

13. **स्वर की स्थिति** – हाथ की पाँच अंगुलियों में से तर्जनी मे गान्धार तथा मध्यमा में ऋषभ की स्थिति तथा अनामिका में षड्ज, कनिष्ठिका में धैवत है। कनिष्ठा के नीचे मूल भाग में निषाद स्वर की स्थिति बतायी गयी है। (तालिका–19)

14. **स्वरों का प्रतिपादन**[14] – स्वरों का प्रतिपादन तीन प्रकार से होता है।

(1) उदात्त (2) अनुदात्त (3) स्वरित

उदात्त स्वर में 'दीप्ता' श्रुति होती है। स्वरित में भी 'दीप्ता' की स्थिति मानते और अनुदात्त में 'मृदु' श्रुति है।

उदात्त में निषाद और गान्धार स्वर है, अनुदात्त में ऋषभ और धैवत स्वर है और षड्ज, मध्यम तथा पञ्चम, स्वरित में प्रकट होते हैं।

प्रकृति में चार वर्ण हैं और प्रविचार के चार प्रकार हैं। 8 प्रकार के विकल्प है इसको देव 16 प्रकार का जानते हैं। वर्ण प्रशन्नचारी सृजन किया गया है। तीसरा अवरोहण होता है, चौथा आरोहण। इस तरह से वर्णों के ज्ञाता वर्ण को जानते हैं । वहाँ पर सचर स्थायी है और सचर तो चर हो गया जो अवरोहण वर्ण है; उसका अवरोहण निर्दिष्ट करना चाहिये। (तालिका–20)

– गांधर्व लक्षण वर्णन– 5–7 ब्रह्मण पुराण।

तालिका–18

स्वर के नाम	स्वर का स्थान
षड्ज	ललाट
ऋषभ	दोनों भौंहों के मध्य
गान्धार	दोनों कानों में
मध्यम	कंठ
पञ्चम	रसना
धैवत	हृदय
निषाद	हृदय

तालिका–19

स्वर के नाम	पाँच अंगुलियों में स्वर की स्थिति
षड्ज	अनामिका
ऋषभ	मध्यमा
गान्धार	तर्जनी
मध्यम	तर्जनी
पञ्चम	–
धैवत	कनिष्ठका
निषाद	कनिष्ठा के नीचे का मूल भाग

तालिका–20

स्वर के नाम	स्वरों का प्रतिपादन
षड्ज	स्वरित
ऋषभ	अनुदात्त
गान्धार	उदात्त
मध्यम	स्वरित
पञ्चम	स्वरित
धैवत	अनुदात्त
निषाद	उदात्त

तालिका–21

(3) नारद पुराण – शिक्षा निरूपण (इसे द्विजातीय शिक्षा कही जाती है।)

स्वर	स्वरो के नाम	स्वर जिन समुदाय को प्रसन्न करते हैं।	ग्राम में ताल कितनी होती हैं।	वेदों की मूर्च्छना के नाम	पितृगण की मूर्च्छना एवं पक्ष आव्याथिनी	ऋषियों की मूर्च्छना	स्वरों के रंग	स्वरों की जाति	वायु के सवर	पशु पक्षी के स्थान	स्वर उठने के स्थान	अधिष्ठाता	किस देवता द्वारा गाया जाता है
सा	षड्ज	देवों को	14	नन्दी	विश्वभृता	उत्तरमन्द्रा	पदम दल की आभा वाला	ब्राह्मण	मध्यम	मोर	कंठ	ब्रह्माजी	अग्नि
रे	ऋषभ	ऋषियों को	–	विशाला	चन्द्रा	अचिरूढता या अभिरूद्रता	शुक्र के पिञ्जर समान	क्षत्रीय	गाधांर	गौऐ चालक	शिर (मस्तक)	अग्निदेव	ब्रह्माजी
ग	गांधार	पितृगण	15	सुमुखी	हेमा	अश्वकान्ता	सुवर्ण	वैश्चार्द्वन अर्ध –विधि से शुद्र	ऋषभ	अजाविक बकरा	अनुनासिक (नासिका)	गौएँ	सोमदेव
म	मध्यम	गन्धर्भों को	20	चित्रा	कपर्दिनी	सौबीरा	कुन्द के पुष्प तुल्य	ब्राह्मण	षड्ज	क्रोञ्च	हृदय	विष्णु	विष्णु
प	पञ्चम	देवों को और पितृगण को	–	चित्रवती	मैत्री	हृषिका	कृष्ण	ब्रह्मण	धैवत	वसंत ऋतु में कोयल	छाती	सोम	नारद
ध	धैवत	भूतों को	–	सुखा	वाहिति	उत्तरायता	पति	क्षत्रीय	निषाद	अश्व मेठ	ललाट	सूर्य	तम्बरू
नि	निषाद	वृक्षों को	–	वला		रजनी	सभी वर्ण होते हैं।	वेश्याद्धंत आर्वविधि	पञ्चम	हाथी	समस्त संधियाँ से		तम्बरू

संदर्भ :– वायु पुराणम, अध्याय 86 (तत्र वेवस्वंमनुवंशा गांधर्व मूर्छना) (श्लोक 36 से 50)
अनुवादक – राम प्रताप त्रिपाठी शास्त्री
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वही श्लोक 55 से 67 तक

श्रुति – वह आवाज जो गीत में प्रयुक्त की जा सके और एक दूसरी से अलग तथा स्पष्ट पहचानी जा सके, श्रुति कहलाती है।

इसे अधिक स्पष्ट समझने के लिये मान लीजिये, हमने पहले एक नाद लिया, जिसकी आंदोलन संख्या 100 कम्पन/से. है। फिर हमने दूसरा वाद लिया; जिसकी आंदोलन संख्या 101 कम्पन/से. है। वैज्ञानिक दृष्टि से तो ये दो भिन्न नाद है, परन्तु इनकी कंपन संख्याओं में इतना कम अन्तर है कि किसी कुशल संगीतज्ञ के कान भी इन दोनों नादों को पृथक–पृथक शायद ही पहचान सकेंगे। अब यदि हम दूसरे नाद में क्रमशः एक कम्पन प्रति सैकेण्ड बढ़ाते जायें तो ऐसी स्थिति आयेगी कि ये दोनों नाद अलग अलग स्पष्ट पहचाने जा सकेंगे या इन नादो को पृथक्–पृथक् स्पष्ट सुना जा सकेगा। इसी आधार पर विद्वानों ने श्रुति की परिभाषा यह दी है कि जो नाद एक दूसरे से पृथक तथा स्पष्ट पहचाना जा सके, उसे "श्रुति" कहते हैं।

एक विद्वान एक सप्तक में ऐसे पृथक्–पृथक् सुने जा सकने वाले नादों की संख्या 22 मानते हैं। उदाहरण के लिये निम्नांकित श्लोक देखिये :–

तस्य द्वाविंशतिभैदेश्रवणात् श्रुतयो मताः।[14]

हृद्याभ्यन्तरसंलग्ना नाड्यो द्वाविंशतिर्मताः।।

अर्थात हृदय स्थान में 22 नाडियाँ हैं। उनके सभी नाद स्पष्ट सुने जा सकते हैं । अतः उन्हीं को 'श्रुति' कहते हैं। यही नाद के 22 भेद माने गये हैं। इन 22 श्रुतियों में से 12 स्वर चुनकर गान में प्रयुक्त किया जाने लगा। श्रुतियों के 22 भेद निम्नानुसार माने गये हैं।

संगीत विशारद, डॉ. लक्ष्मी नारायण गर्ग, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ.प्र.)
नारद पुराण शिक्षा निरूपण
संगीत विशारद

तालिका–22

बाईस श्रुतियों पर प्राचीन व आधुनिक शुद्ध स्वर–स्थापना

श्रुति सं.	श्रुति–नाम	प्राचीन ग्रंथों के शुद्ध स्वर स्थान	आधुनिक संगीत–पद्धति के अनुसार शुद्ध स्वर विभाजन
1	तीव्रा		षड्ज (स)
2	कुमुल्दती		
3	मंदरा		
4	छंदोवती	षड्ज (स)	
5	दयावती		ऋषभ (रे)
6	रजंनी		
7	रतिका	ऋषभ (रे)	
8	रौद्री		गांधार (ग)
9	क्रोधा	गांधार (ग)	
10	वज्रिका		मध्यम (म)
11	प्रसारिणी		
12	प्रीति		
13	मार्जनी	मध्यम (म)	
14	क्षिति		पंचम (प)
15	रक्ता		
16	संदीपनी		
17	आलापिनी	पंचम (प)	
18	मदन्ती		धैवत (ध)
19	रोहिणी		
20	रम्भा	धैवत (ध)	
21	उग्रा		निषाद (नि)
22	क्षेभिणी	निषाद (नि)	

स्वर का उद्गमन –

वेद की ऋचाओं में अक्षरों के ऊपर और नीचे कई प्रकार की आड़ी और खड़ी रेखा, स्वर के बोलने के नियम को बताता है। उच्च, मध्यम और मंद स्वर बोलने के लिये नियम बनाये गये है; जिसे स्वर कहा जाता है। इनके मुख्य भेद तीन माने गये हैं। अर्थात् उदात्त, अनुदात्त और स्वरित। पर इनमें से भी प्रत्येक स्वर अधिक अथवा न्यून रूप में बोला जा सकता है। अतः प्रत्येक के दो भेद हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त एक स्वर और माना गया है। 'एक श्रुति' जिसमें तीनों का तिरोभाव हो जाता है। इस प्रकार सात स्वर माने गये हैं। इसकी व्याख्या **महाभाष्यकार महामुनि पंतजंलि** ने इस प्रकार किया है।

''स्वयं राजन्त इति स्वराः। आयामो दारूण्यमणुता रवस्येतुच्चै''

कराणि शब्दस्य। आयामो गात्राणां निग्रहः, दारूण्यं स्वरस्य

दारूतणा रूक्षता, अणुता कष्ठस्य संवृलता, उच्चैः कराणि शब्दस्य।

'अन्वव सर्गो गात्राणां शिथिलता, भार्दवं स्वरस्य मृदुता।

स्निन्धता, उरूता स्वस्थ्य महत्ता कण्ठस्येति नीचैः कराणि शब्दस्य।

''त्रिस्वम्यैणा धीमहे, त्रिप्रकारं रज्भिरधीमहे, कैश्चिदुदात्तगुर्णेः।

कैश्चिदनुदात्त केश्चिदुभम गुर्णः। तद्यथा शुक्ल गुणः शुक्ल; कृष्णगुणः

कृष्णः य इदानीभूभयगुणः स तृतियारव्यां लभते, कल्याण

इति ना सारङ्ग इति वा।''

अर्थात् ''जो बिना दूसरे की सहायता के स्वयं ही प्रकाशमान अथवा प्रकट है; वे स्वर कहे जाते हैं। अंगों का रोकना, या वाणी को रूखा करना अथवा उच्च स्वर से बोलना, कण्ठ को

भी कुछ रोक देना; ये सब बातें शब्द को उदात्त करने वाली है। इस तरह उदात्त स्वर इन्हीं नियमों के अनुकूल बोला जाता है। उदात्त करने वाली होती है अर्थात् उदात्त स्वर के नियम के अनुकूल बोला जाता है।

"शरीर के अंगों या गात्रों का ढीलापन, स्वर की कोमलता कण्ठ को फैला देना, ये सब बातें शब्द को 'अनुदात्त' करने वाली हैं। इस प्रकार हम सब तीन प्रकार के स्वरों से बोलते हैं, अर्थात कहीं उदात्त, कहीं 'अनुदात्त' और कहीं उदातानुदात्त अर्थात् स्वरित। जिस प्रकार श्वेत और काले रंग अलग–अलग होते हैं परन्तु इन दोनों के मिला देने पर एक तीसरा रंग होता है अर्थात् खाकी अथवा आसमानी। इसी तरह उदात्त और अनुदात्त के गुण अलग अलग है, पर इन दोनों को मिला देने पर एक तीसरा स्वर पैदा हो जाता है; जिसे स्वरित कहते हैं।

"एक श्रुति" में भी उदात्त और अनुदात्त दोनों का समिश्रण होता है, इसलिये 'स्वरित' और 'एक श्रुति' का भेद करने में कठिनाई पड़ती है। प्राचीन व्याख्याकारों ने यह मत प्रकट किया है कि 'स्वरित' में उदात्त और अनुदात्त का सम्मिश्रण इस प्रकार होता है। जैसे काठ और लाख का जोड़। ये दोनों एक जान पड़ने पर भी अलग–अलग दिखलायें जा सकते हैं। पर एक श्रुति में दोनों प्रकार के स्वरों का मेल इस प्रकार होता है जैसे दूध और पानी का, जिनको अलग अलग नहीं किया जा सकता और न अनुभव में लाया जा सकता है।

इन सात भेदों में भी एक दूसरे का संयोग होने से कई प्रकार के भेद पैदा होते हैं; जिसके लिये स्वर चिन्ह में कुछ परिवर्तन किया जाता है। स्वरित के नौ भेद बतलाये हैं।

(1) संहितत्र (2) जात्य (3) अभिनिहित (4) क्षेत्र (5) प्राश्लिष्ट

(6) तैरोव्यज्जन (7) वैवृते अथवा पादवृत (8) तैरो विराम (9) प्रतिहित।

पिङगलच्छन्दः सूत्रम्, श्रीराम गोविन्दशर्मशुक्लेन

(वैदिकच्छन्दः प्रकरणान्तम्) व्याकरणाचार्य श्री अयोध्यानाथ (चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी–1 (Page 68) 1969

कल्याण, संक्षिप्त नाद–विष्णुपुराणाडक (28 वर्ष का विशेषाडक) कल्याण–कार्यालय गीताप्रेस, गोरखपुर

कई प्राचीन ग्रन्थों में स्वरों के 18 भेद लिखे हैं; जिसके द्वारा स्पष्ट उच्चारण कर लेते थे। तदउपरान्त मात्र सात स्वरों का उपयोग करने की प्रथा हो गई । अब इन 7 स्वरों के उच्चारण में कठिनाई होने के कारण स्वर संख्या तीन ही रह गई। परन्तु वर्तमान समय में ऐसे वेदपाठी इने गिने रह गये हैं। इसलिये अब हाथ को ऊपर नीचे करके ही स्वरों का बोध कराया जाता है।

साधारणतया अनुदात्त के लिये अक्षर के नीचे आड़ी लकीर देने तथा स्वरित के लिये ऊपर खड़ी रेखा बनाने का नियम है; उदात्त का कोई चिन्ह नहीं है। पर ये चिन्ह भी प्रत्येक स्थान में एक से नहीं है। अतः स्वर संगीत में सात ही होते हैं।

स्वर –

श्रुतियों के मेल से उत्पन्न ध्वनि स्वर कहलाती है। अर्थात यदि कोई ध्वनि नियमित और आर्वत कम्पनों से मिलकर उत्पन्न होती है तो उसे 'स्वर' कहते हैं। इसके विपरीत जब कंपन अनियमित तथा पेचीदा या मिश्रित हो तो उस ध्वनि को 'कोलाहल' कहते हैं।

भारतीय संगीतज्ञों ने एक स्वर (ध्वनि) से उससे दुगुनी ध्वनि तक के क्षेत्र मे ऐसे संगीतोपयोगी नाद 22 माने है; जिन्हें 'श्रुतियाँ' कहा गया है। ध्वनि की प्रारम्भिक अवस्था "श्रुति" और उसका अनुरणात्मक (गुजित) स्वरूप ही 'स्वर' कहलाता है।

स्वर सात प्रकार के होते हैं।

1. सा – षड्ज
2. रे – ऋषभ
3. ग – गंधार

4. म – मध्यम

5. प – पञ्चम

6. ध – धवैत

7. नि – निषाद

इनके अलावा पाँच विकृत स्वर होते हैं; जिनमें चार कोमल स्वर – रे, गा, धा, नि तथा एक तीव्र स्वर में होते हैं। इस प्रकार सात शुद्ध स्वर व पाँच विकृत स्वर है। अतः कुल मिलाकर 12 स्वर होते हैं।

श्रुति और स्वर तुलना[14]

श्रुतयः स्युः स्वराभिन्नाः श्रावणत्वेन हेतुना।

अहिकुण्डलवत्तत्र भेदोक्तिः शास्त्रसम्मता।।

सर्वाश्च श्रुतयस्तत्व द्रागेषु स्वरतां गताः।

रागाः हेतुत्व एतासां श्रतिसंज्ञैव सम्मता।

– **संगीत पारिजात**

अर्थात् जो सुनी जा सकती है; वह 'श्रुति' कहलाती है। स्वर और श्रुति में भेद इतना ही है, जितना सिर्फ तथा उसकी कुण्डली में। अर्थात् इन वाइस श्रुतियों में से जो श्रुतियाँ किसी राग–विशेष में प्रयुक्त होती है; वे 'स्वर' कहलाती हैं। जब किसी अन्य राग में इन स्वरों के अतिरिक्त अन्य श्रुतियाँ काम में ली जाती हैं, तो जो श्रुतियाँ अब काम में आई, वे स्वर बन गई और जो स्वर छोड़ दिये गये, वे पुनः श्रुतियाँ बन गई। उदाहरण के लिये आपने मालकोश राग गाया तो जिन श्रुतियों पर यह राग गाया बजाया जायेगा। वे 'स्वर' कहलाएँगी परन्तु फिर आपने हिंडोल राग गाया,

तो जो श्रुतियाँ मालकोश में प्रयुक्त होते समय स्वर बन गई थीं; अब उन्हें छोड़ना पड़ा। अतः वे पुनः श्रुतियाँ बन गई। और जो श्रुतियाँ हिंडोल में प्रयुक्त होंगी; वे 'स्वर' कहलाएँगी। इस प्रकार श्रुति और स्वर की तुलना में निम्नलिखित चार सिद्धान्त निश्चित हुये :–

1. श्रुतियाँ 22 होती है और स्वर सात।

2. श्रुतियों का परस्पर अन्तराल या फासला स्वरों की अपेक्षा कम होता है। स्वरो का परस्पर अन्तराल श्रुतियों की अपेक्षा अधिक होता है।

3. कण, मीड़ और सूत द्वारा जब तक किसी सुरीली ध्वनि को व्यक्त किया जाता है, तब तक तो वह 'श्रुति' है और उस पर ठहराव हुआ कि वह स्वर कहलाई।

4. श्रुति और स्वर की तुलना में अहोबल पंडित ने 'संगीत–पारिजात' में सर्प और कुण्डली का जो उदाहरण दिया है; उसके अनुसार सर्प की कुण्डली तो श्रुति है और सर्प स्वर है। कुण्डली के अन्दर जिस प्रकार सर्प रहता है; उसी प्रकार श्रुतियों के अन्दर स्वर स्थित हैं।

सप्तक – सप्तक का अर्थ सात, एक स्थान पर सात शुद्ध स्वर निवास करते हैं । अतः इसका नाम सप्तक पड़ा। सप्तक तीन प्रकार के होते हैं।

(1) मंद्र सप्तक – जिस सप्तक के स्वरों की आवाज सबसे नीची या कम हो उसे मंद्र सप्तक कहते हैं। भातखण्डे संगीत पद्धति में इस सप्तक के स्वरों के नीचे एक बिन्दु लगाकर लिखा जाता है।

जैसे – सा़, रे़, गा़, मा़, प़, धा़, नि़

इसकी मात्रा 1/2 होती है।[16]

भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान – डा. सुभद्रा चौधरी, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर संगीत शास्त्र विभाग, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ (म.प्र.)

(2) मध्य सप्तक – इसमें मंद्र सप्तक से दो गुनी आवाज होने के कारण इसे मध्य सप्तक कहा जाता है। मध्य सप्तक के स्वरों को लिखते समय चिन्ह नहीं लगाते। इसकी मात्रा 1 होती है।

(3) तार सप्तक – इसमें मध्यम सप्तक से दो गुनी आवाज होने पर इसे तार सप्तक कहा जाता है। इसकी पहचान के लिये स्वरों के ऊपर बिन्दु लगा दिया जाता है। जैसे – सां, रे, गं, मां, पं, धं, निं

तार सप्तक की मात्रा 2 होती है।

संगीत विज्ञान है क्योंकि इसकी कला में समय का निर्धारण गणित विषय पर आधारित है यह स्पष्ट करने के लिये संगीत में उपर्युक्त परिभाषाओं का चित्रण करना आवश्यक है।

इसमें आने वाली संवृत संख्या तथा असंवृत संख्याओं के गुणक यह सिद्ध करते हैं कि संगीत की विभिन्न कलाऐं तथा विभागीयकरण वर्ण मेरु के आधार पर किया गया है।

इस अध्याय में ताल की परिभाषा तथा अन्य कलाओं का संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

नाद – **नादेन व्यज्यते वर्णः पद वर्णाद् पदाद्वचः।**[22]

वचसा व्यवहारोऽयं नादाधोनमतो जगत्।

संगीत की उत्पत्ति केवल नाद से होती है, किन्तु भाषा, जो व्यवहार का माध्यम है, और नाद के बीच कई सीटियाँ हैं। नाद से वर्ण, वर्ण से पद, पद से वाक्य और वाक्य से भाषा बनती है। लौकिक व्यवहार भाषा से ही होता है इसलिये संपूर्ण जगद् नाद के आधीन है।

शब्द बुद्धि की देन है। नाद हृदय का प्रकाशक है। भाषा का उपकरण वर्णात्मक वाक् है और संगीत का नादात्मक वाक् जैसे बीज के दो दक् होते हैं, उसी प्रकार वाक् तत्व के दो तत्व हैं। वर्णात्मिका वाणी में सार्थक पद होने के कारण अर्थ या विचार की अभिव्यक्ति की प्रधानता होती है और नादात्मक वाणी में विशुद्ध नाद भाव सामान्य की अनुभूति की प्रधानता है। दोनों की विभाजक रेखा सूक्ष्म है।

अभिव्यक्ति का मूल माध्यम दोनों में ध्वनि है । इसलिये भाषा और संगीत का बड़ा घनिष्ट संबंध है।

नाद की अभिव्यक्ति देश और काल में होती है काल तत्व ध्वनि मात्र से अभिन्न रूप से जुड़ा है।

ध्वनि की उत्पत्ति प्रसार और ग्रहण काल में ही होता है। यह काल तत्व नियमित, निरंन्तर गति का रूप लेता है; जो लय बनकर संगीत, ताल और छन्द का निर्माण करता है और अनियमित गति में रहकर सामान्य वाक् व्यवहार का गंध कहलाता है।

छन्द हानो न शब्दोऽस्ति न च्छन्दश्शब्दवर्जितम्। नाट्यशास्त्र 14/45

क्योंकि ऐसी कोई ध्वनि नहीं जो कालमान के बाहर हो और न काल का मान ही ध्वनि के बिना होता है।

वाक् और काल दो तत्व मिलकर नाद की उत्पत्ति करते हैं; जो समस्त विश्व में व्यवहार का आधार है। ताल तत्व क्रिया प्रधान सत् से पद तत्व अर्थ और रस या ज्ञान प्रधान चित्त से तथा स्वर तंत्व अनुभूति प्रधान आनन्द से सम्बद्ध है।

क्रिया से ज्ञान, ज्ञान से आनन्द की उपलब्धि होती है। क्रिया प्रधान काल का प्रयोजन काल का विभाजन है इसलिये पद आवश्यक है।

स रि ग पदों के द्वारा स्वर की साधना की जाती है।

काव्य और संगीत मूल ध्वनि की जुड़वा संतान के समान है काव्य में पद और संगीत में स्वर की प्रधानता है। अक्षर स्वर और व्यंजन से संबंद्ध जो है वह पद कहलाता है।

यत् स्यादक्षर सम्बद्ध तत्सर्व पदसंज्ञितम्।

नाट्य शास्त्र –28

अभिनय प्रदान काव्य नाट्य कहलाता है पद अभिनय का आधार है क्योंकि इसमें प्रयत्न आवश्यक है।

वाचि यत्नस्तु कर्तत्यो नाट्य स्मैषा तनुः स्मृता।

–नाट्य शास्त्र 14/2

छन्द ताल अर्थ से युक्त पद होता हे। काव्य में स्वर ताल पद के रूप में व्यक्त होता है और इसे नापने वाला काल तत्व छन्द ही है। काव्यगत पद का शरीर छंद है क्योंकि छन्दोवृद्ध काव्य ही काव्य कहलता है। छन्द केवल अनुभव किये जा सकते हैं कर्ण प्रत्यय नहीं। छन्द नियमित मुख ध्वनि रचना है। वैसे ही जैसे संसार की अन्य रचनाऐं हैं।

छन्द वह लयात्मक, नियमित, अर्थपूर्ण वाणी है; जो पद का रूप धारण करती है।

छन्दोक्षर पदानां हि समत्वं यत्प्रकीर्तितम्।।

कला कालान्तर कृतः स लयो नाम संज्ञितः।

– नाट्यशास्त्र 31/370–371

छन्द के काल में विश्रान्तिकाल ही अक्षर, पद और वाक्यगत लय है। लय बहता छन्द का स्वरूप लक्षण है किन्तु लय ही छन्द नहीं है। लय मे स्व–दीर्घ या लघुगुरू इन निश्चित इकाईयों के आधार पर एक निरन्तर गति से जब काल के खण्ड बनाये जाये और विशेष आकार प्रदान किया जाय तब छन्द बनता है। छन्द काल विभाजन को निश्चित स्वरूप प्रदान करता है जबकि लय का प्रयोजन काल विभाजन मात्र है। काल का अव्याकृत रूप लय और व्याकृत रूप छन्द है और ध्वनि का अव्याकृत रूप नाद और व्याकृत रूप अक्षर, वर्ण, पद आदि है। नाद बह्मा स्वर और लय के द्वारा संगीत में व्यक्त होता है। क्योंकि संगीत में मूल तत्व दो (स्वर और लय) ही है। स्वर यानि ध्वनि जिसका मूल रूप स्पन्दन, शक्ति, ऊर्जा है। वह काल में ही व्यक्त होता है।

काल की गणना दिन, मास वर्ष के रूप में की जाती है किन्तु ताल की प्रक्रियाओं में काल अवधि अत्यधिक न्यून होती है। अतः इसे मैट्रोनोम अथवा ताली के बजाने से गणना की जाती है पूर्वजों ने संगीत में समय की गणना हेतु निम्न लिखित निर्देश दिये हैं। मैट्रोनोम से लय यंत्र है।

******-

संगीत में समय

संगीत समय सार में भिन्न प्रकार के समय की माप है। 100 कमल पत्तों को एक के उपर एक रखकर सुई द्वारा तेजी से भेदन करने में लगा समय एक 'क्षण' है।

8 क्षण	=	1 लव
8 लव	=	1 काष्टा
8 काष्टा	=	1 निमेष
8 निमेष	=	1 कला
2 कला	=	1 त्रुटि
2 त्रुटि	=	1 अर्द्धद्रुत = अणु
2 अर्द्धद्रुत	=	1 बिन्दु
2 बिन्दु	=	1 लघु
2 लघु	=	1 गुरू
3 लघु	=	1 प्लुप्त

लघु से आरम्भ करके निमेष का काल प्रमाण लघु का 256 वाँ भाग है।

बिन्दु = द्रुत $= \frac{1}{2}$

अर्धद्रुत = अणुद्रुत $= \frac{1}{4}$

त्रुटि = अणु अणुद्रुत $= \frac{1}{8}$

कला $= \frac{1}{8} x \frac{1}{4} = \frac{1}{32}$

इसी काल गणना को वर्ण मेरू में व्यक्त किया जाता है :–

संगीत में समय[1]

संगीत समय सार में भिन्न प्रकार के समय की माप है। 100 कमल पत्तों को एक के उपर एक रखकर सुई द्वारा तेजी से भेदन करने में लगा समय एक 'क्षण' है।

8 क्षण	=	1 लव
8 लव	=	1 काष्टा
8 काष्टा	=	1 निमेष
8 निमेष	=	1 कला
2 कला	=	1 त्रुटि
2 त्रुटि	=	1 अर्द्धद्रुत = अणु
2 अर्द्धद्रुत	=	1 बिन्दु
2 बिन्दु	=	1 लघु
2 लघु	=	1 गुरू
3 लघु	=	1 प्लुप्त

लघु से आरम्भ करके निमेष का काल प्रमाण लघु का 256 वाँ भाग है।

बिन्दु = द्रुत $= \frac{1}{2}$

अर्धद्रुत = अणुद्रुत $= \frac{1}{4}$

त्रुटि = अणु अणुद्रुत $= \frac{1}{8}$

कला $= \frac{1}{8} x \frac{1}{4} = \frac{1}{32}$

इसी काल गणना को वर्ण मेरू में व्यक्त किया जाता है :–

चित्र–6

वर्णमेरु के अनुसार समय अंतराल के ताल का अध्ययन करना।

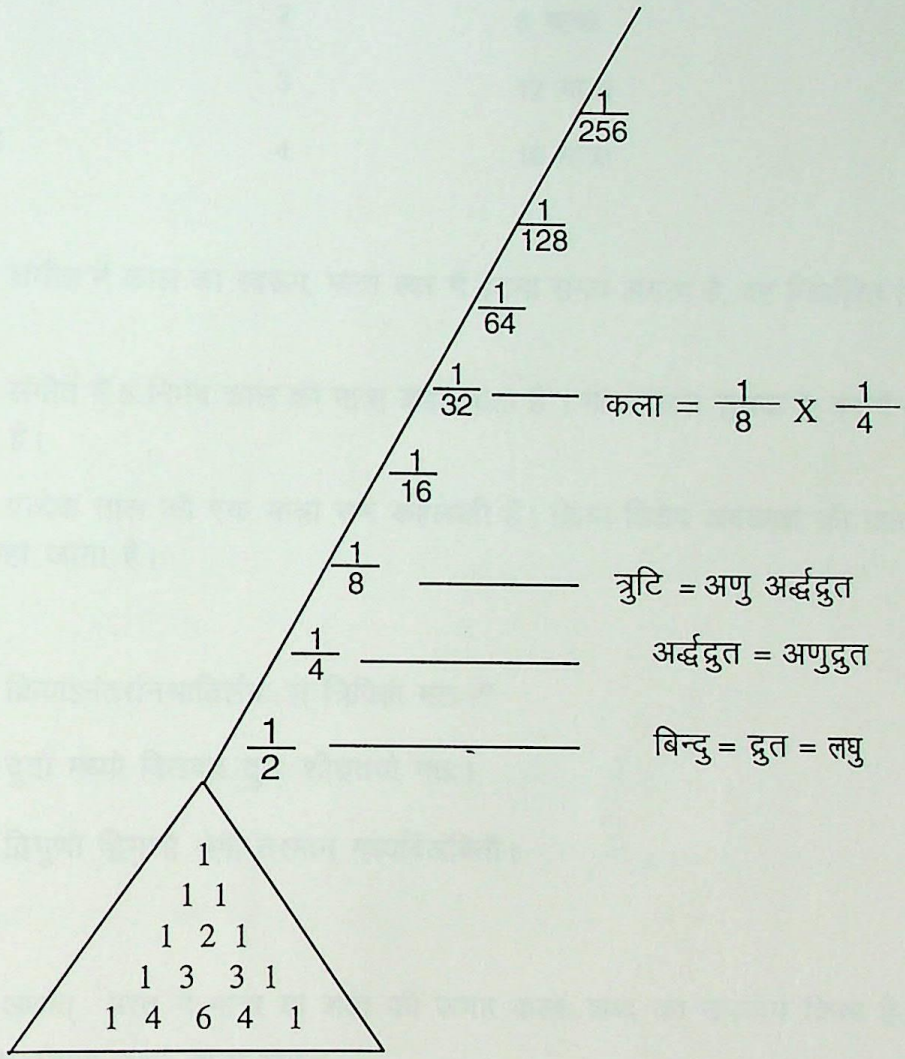

निमेष = $\frac{1}{32} x \frac{1}{8} = \frac{1}{156}$

नाम	चिन्ह	काल मान मात्रा
अनुद्रुत क्षमता विराम	˘	1 मात्रा
द्रुत	o	2 मात्रा
लघु	1	4 मात्रा
गुरु	2	8 मात्रा
प्लुप्त	3	12 मात्रा
काकपद	4	16 मात्रा

संगीत में काल का स्वरूप, मात्रा स्वर में इतना समय लगता है, वह निर्धारित किया जाता है।

संगीत में 5 निभेष काल को मात्रा कहा जाता है । मात्रा काल सूचक है; इसमें काल रूप निम्नानुसार है।

प्रत्येक ताल की एक मात्रा सम कहलाती है। क्रिया विशेष अवकाश की जाती है जिसे लय भी कहा जाना है।

क्रियाऽनंतर्रानश्रातिर्लयः स त्रिविधो मतः।[22]

द्रुतो मध्यो विलंबश्च द्रुतः शीघ्रतयो मतः।

द्विगुणौ द्विगुणौ श्रेमौ तस्मान् मध्यविलंबितौ।

अर्थात् भरत ने मात्रा या शब्द की जगह कलाः शब्द का उपयोग किया है। कला ही मात्रा है ''निमेष काले मात्रा स्यात्'।

******

ताल

संगीत में समय के नाप को मात्रा कहते हैं। विभिन्न मात्राओं के समूह को ताल* कहते हैं। ताल का मुख्य लक्ष्य काल है। अर्थात् वर्ण मेरु के समय अथवा काल का असदाल का विस्तार एक लघु शब्द के उच्चारण के लिये जितने समय की आवश्यकता होती है; उसे एक मात्रा कहते हैं ताल कहलाता है। मात्रा को नापने के लिये ताल का उपयोग किया जाता है।

ताल तीन प्रकार के होते हैं।

1. सम 2. ताली 3. खाली

सशब्द (लकड़ी तेजी से घुमाने में उत्पन्न आवाज (जुँ S S S) और निःशब्द (लकड़ी घुमाने में शब्द सुनायी न देना) क्रिया विशेष के योग से बनने वाला ताल, काल के विभाजक है। क्रिया अर्थात् ताल से कला का ज्ञान होता है। ताल गीत वाद्य और नृत्य में एक व्यवस्था प्रदान करता है।

क्रिया – क्रिया का अर्थ हस्त क्रिया है; जो दो प्रकार के शास्त्र में मान्य है; वे हैं –

1. सशब्द जिसमे दोनों हाथों ताली बजाते हैं।

2. निः शब्द जिस क्रिया निम्न क्रिया है। अतः हाथ को बाहर फेंककर जो क्रिया होती है वह खाली ताली कहलाती है।

सशब्द क्रिया ताली अथवा ताल कहते हैं।

एक मात्रा को सम कहते है, जब एक ताली बजाते हैं।

ताल की क्रिया की माप* – छन्द शास्त्र में अक्षर ह्रस्व, दीर्घ के आधार पर की जाती है। यह अक्षर के उच्चारण में लगने वाले समय का अनुपात है। जैसे साम गान में

1	S	S
(लघु)	(गुरु)	(प्लुत)

छन्द के अनुसार ताल की माप निम्नानुसार है।

1	2	3	(मान निमेष में)
5	10	15	(मान मार्ग ताल में)

भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान – डॉ. सुमन चौरसिया, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर संगीत शास्त्र विभाग, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (म.प्र.)

भारतीय संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण, डॉ. [illegible]

ताल

संगीत में समय के नाप को मात्रा कहते हैं। विभिन्न मात्राओं के समूह को ताल[16] कहते हैं। ताल का मुख्य लक्ष्य काल है। अर्थात् वर्ण मेरु के समय अथवा काल का अंसदाल का विस्तार एक लघु शब्द के उच्चारण के लिये जितने समय की आवश्यकता होती है; उसे एक मात्रा कहते हैं ताल कहलाता है। मात्रा को नापने के लिये ताल का उपयोग किया जाता है।

ताल तीन प्रकार के होते हैं।

1. सम 2. ताली 3. खाली

सशब्द (लकड़ी तेजी से घुमाने में उत्पन्न आवाज (जुँ ऽ ऽ ऽ) और निःशब्द (लकड़ी घुमाने में शब्द सुनायी न देना) क्रिया विशेष के योग से बनने वाला ताल, काल के विभाजक है। क्रिया अर्थात् ताल से कला का ज्ञान होता है। ताल गीत वाद्य और नृत्य में एक व्यवस्था प्रदान करता है।

क्रिया – क्रिया का अर्थ हस्त क्रिया है; जो दो प्रकार के शास्त्र में मान्य है; वे हैं –

1. सशब्द जिसमे दोनों हाथों ताली बजाते हैं।

2. निः शब्द जिस क्रिया निम्न क्रिया है। अतः हाथ को बाहर फेंककर जो क्रिया होती है वह खाली ताली कहलाती है।

सशब्द क्रिया ताली अथवा ताल कहते हैं।

एक मात्रा को सम कहते है; जब एक ताली बजाते हैं।

ताल की क्रिया की माप[16] – छन्द शास्त्र में अक्षर हस्व, दीर्घ के आधार पर की जाती है। यह अक्षर के उच्चारण में लगने वाले समय का अनुपात है। जैसे साम गान में

1	ऽ	ऽ
(लघु)	(गुरु)	(प्लुप्त)

छन्द के अनुसार ताल की माप निम्नानुसार है।

1	:	2	:	3	(मान निमेष में)
5	:	10	:	15	(मान मार्ग ताल में)

भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान – डॉ. सुभद्रा चौधरी, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर संगीत शास्त्र विभाग, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (म.प्र.)

भारतीय संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण, डॉ. स्वतंत्र शर्मा

1. (निमेषाः पञ्च विज्ञेया गीत काले कालान्तरम्।–नाट्यशास्त्र 31/4)

2. पञ्चलहवश्ररोच्चार मिता मात्रेह करमते।

अनया मात्रमात्र स्यात् लघु गुर्वाधि कल्पना।

–संगीत रत्नाकर

मार्ग और एक कला आदि के रूप

मार्ग

निश्चित काल से युक्त कला और पात के समूह को मार्ग कहते हैं। प्रत्येक मार्ग में चार कलाऐं S S : S' हैं । मार्ग बदलने से लय बदलती है।

मार्ग चार प्रकार की होते हैं।

1. ध्रुव – ध्रुव में एक मात्रा की कला होती है।

2. चित्र – 2 मात्रा की कला होती है।

3. कार्तिक – 4 मात्रा की कला होती है।

4. दक्षिण मार्ग – 8 मात्रा की कला होती है।

जब गुणोत्तर श्रेणी को किसी कॉमन फेक्टर से गुणा किया जाता है तो इसका परिणाम से एक दूसरी गुणोत्तर श्रेणी प्राप्त होती है।

तालिका–23

मार्ग	कला	अक्षर काल	मात्रा	वर्ण मेरु के अक्षर के अनुसार अक्षर काल (संवृत संख्या) से दस गुनी
ध्रुव मार्ग	S S S S	5 5 5 5	1 1 1 1	20
चित्र मार्ग	S S S S'	10 10 5 15	2 2 1 3	40
कार्तिक	S S S S	20 20 10 30	4 4 2 6	80
दक्षिणा मार्ग	S S S S'	40 40 20 60	8 8 4 12	160

अतः मार्ग का वर्गीकरण वर्ण मेरु में संवृत संख्या के अनुसार मार्ग की अक्षर काल ध्रुव, चित्रा, कार्तिक तथा दक्षिणा मार्ग में वर्ण मेरु की संवृत संख्या के गुणांक हैं। ये अक्षर काल 20, 40, 80, 160 उपरोक्त में वर्गीकृत किया गया है।

मार्ग में मात्रा की जगह गुरु का उपयोग किया जाता है। यहाँ मात्रा का अर्थ लघु है। 4, 8, 16 इन तीनों रूपों को गुरु कहते हैं। अर्थात् 8, 16, 32 मात्रा लघु होती है लेकिन मात्रा की बजाय गुरु का उपयोग किया जाता है। यहां मात्रा का अर्थ S (गुरु) लघु (I) है।

भरत ने गुरु को ताल की प्रकृति यह चच्चत्पुट के तीन रूपों में 4, 8, 16 गुरु अर्थात् 8, 16, 32 लघु (मात्रा) है।

नाट्यशास्त्र के अनुसार प्राचीन काल में कुल संख्या के आधार पर निम्न तालों का प्रचलन है। (1) चञ्चत्पुट (2) चापपुट (3) षट्पितापुत्रक

(1) चञ्चत्पुट :– मध्यलय, जाति चतुरस्त्र तथा कला चार

मात्रा क्रम – गुरु, गुरु, लघु, प्लुत कुल मात्रा 8

अक्षर क्रम – 2, 2, 1, 3 कुल मात्रा 8

(2) चाचपुट :– मध्यलय, ज्यस्त्र जाति तथा चार कला

मात्रा क्रम – गुरु, लघु, लघु, गुरु कुल मात्रा 6

अक्षर क्रम – 2, 1, 1, 2 कुल अक्षर 6

(3) षट्पिता पुत्रक अथवा पंचपाणि :– मध्यलय, मिश्र जाति तथा छः कला

मात्रा क्रम – प्लुत, लघु, गुरु, गुरु, लघु प्लुत कुल मात्रा 12

अक्षर क्रम – 3, 1, 2, 2, 1, 3 कुल अक्षर 12

चञ्चत्पुट तथा चापपुट ताल कलाभेद के अनुसार नानाविधि बताये गये हैं; जैसे यथाक्षर, द्विकल, चतुष्कल, अष्टकल तथा षोडशकल। त्रयस्त्र ताल कला प्रस्तार के अनुसार निम्न छः प्रकार का बतलाया गया है त्रिकल, षटकल, द्वादशकल, चतुर्विशंतिकल, अवृचत्वारिंशत्कल तथा षण्णवतिकल। चञ्चत्पुट के अन्तर्गत 'यथाक्षर' से तात्पर्य ऐसे तालरूप से प्रतीत होता है; जो ताल संज्ञा के अक्षरों के अनुरूप है अर्थात कलाओं की संख्या व गणना विशिष्ट ताल संज्ञा के अक्षरों के बराबर होती है। अर्थात् चच्चतपुट संज्ञा के अन्तर्गत चार अक्षर क्रमशः गुरु, गुरु, लघु तथा प्लुत है, अतएव गीत के प्रत्येक अक्षर का गान एक 'कला' में किये जाने पर वह 'यथाक्षर ' अथवा 'एककल' नाम से सम्बोधित होगा।

ताल के रूप – ताल के नाम में लघु गुरू के अनुसार ताल के तीन रूप[16] होते हैं।

(1) यथाक्षर (एककल) (2) द्विकल (3) चनुष्कल

यथाक्षर में कुल जितने गुरु हों, द्विकल ओर चतुष्कल में उसके ठीक दुगना होते हैं। द्विकल रुप प्राप्त करने के लिये यथाक्षर की कला संख्या दूनी करते हैं। अर्थात् लघु को गुरु में परिवर्तित करके पाद भाग में 2–2 कलायें रखी जाती हैं। जैसे–

तालिका–24

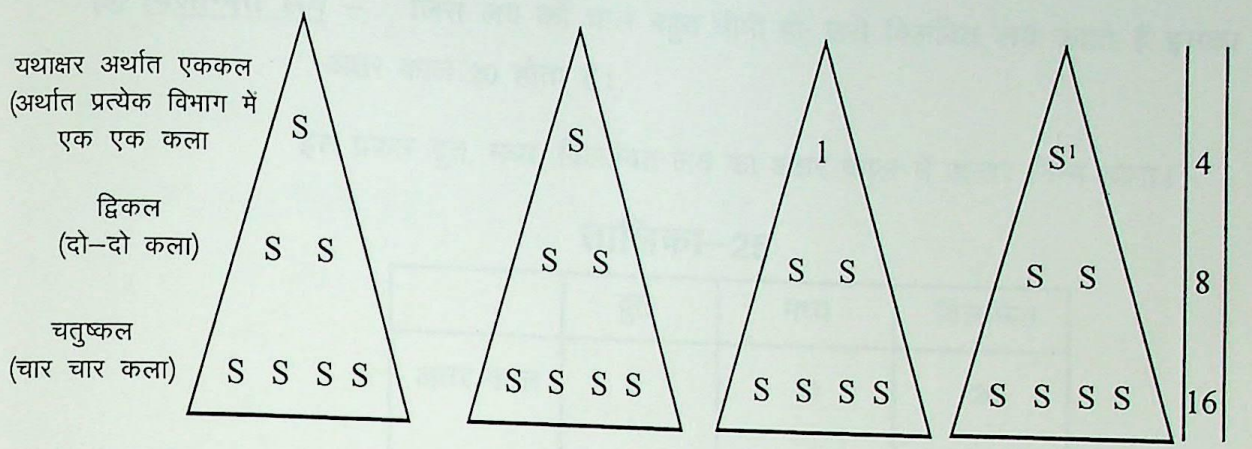

चतुस्कल द्विकल से क्रिया काल (Duration) दूनी होती है। यहाँ 4, 8, 16 वर्णमेरु की संवृत संख्या है। यह ताल का काल विभाजन कहलाता है। यह काल विभाजन सदृश्यता तथा एकता के सिद्धान्त के आधार पर वर्ण मेरु के अनुसार है। इसी में कम्प्यूटर की प्रणाली का वैदिक कम्प्यूटर से तुलना की गई है।*

लय

क्रिया के अनन्तर यानि बिल्कुल साथ होने वाली विश्रांति को लय[17] कहते हैं अर्थात् एक क्रिया और दूसरी क्रिया के बीच के काल को लय कहते हैं। लय तीन प्रकार के होते हैं।

(1) द्रुत लय (2) मध्य लय (3) विलम्बित लय

(1) **द्रुत लय** – जिस लय की चाल विलंबित लय से चार गुनी और मध्य लय से 2 गुनी हो तो उसे द्रुत लय कहते हैं। इसकी अक्षर चाल पाँच होती हैं।

भारतीय संगीत मे ताल और रूप विधान, डॉ. सुभद्रा चौधरी, खेरागढ़

भारतीय संगीत का इतिहास, डॉ. शरदचन्द्र श्रीधर परांजपे चौरखम्बा विधाभवन वारणसी

(2) **मध्य लय** – जिस लय को चाल विलंबित से तेज हो लेकिन द्रुत से कम हो, मध्य लय कहलाता हैं । इसकी अक्षर चाल दस होती है।

(3) **विलम्बित लय** – जिस लय को चाल बहुत धीमी हो; उसे विलंबित लय कहते हैं इसका अक्षर काल 20 होता है।

इस प्रकार द्रुत, मध्य, विलम्बित लय का अक्षर काल में अन्तर निम्न होगा।

तालिका–25

	द्रुत	मध्य	विलम्बित
अक्षर काल	5	10	20

गुरू का ताल रचना मे महत्व – सभी तालों की मूल योनि चञ्चपुट, चाचपुट है। इसके मूल प्रकार चतुरश्र और व्यश्र हैं और मूल इकाई – लघु–गुरु है।

संगीत रत्नाकर में 'कला' को गुरु का पर्याय कहा है। ''गुरुः कलात्र'' ताल पांच प्रकार के होते हैं।

(1) चञ्चपुट के तीन रूपों के क्रम से 4, 8, 16 गरु कहे हैं।

S S I S' अर्थात् 8, 16, 32 मात्रा (लघु) होती है लेकिन 'मात्रा' के बजाय (2 2 1 3) गुरु का प्रयोग किया है। मात्रा का अर्थ यहाँ काल गणना 5 लघु अक्षर है।

भरत ने गुरु को ताल की प्रकृति कहा है

''द्वविधस्मादि तालस्य त्वेका प्रकृति रिष्यते''।

– नाट्यशास्त्र 31/7

गुरु एक स्वभावमत्व (एकता) लाने वाला है।

(2) चाचपुट – इसमें 4 अक्षर हैं; इनका अनुपात S I I S जो 2 1 1 2 के रूप में होता है।

(3) षटपिता पुत्रक – इसमें 6 अक्षर हैं। S' I S S I S' जो 3 1 2 2 1 3 है; इसमें 6 क्रिया

6 गुरु और 6 पादभाग होते हैं। ताल में S' 1 S और S 1 S' खंड एक दूसरे के प्रतिविम्ब हैं।

(4) सम्पक्वष्टाकः – S' S S S S' जो 3 2 2 2 3 हैं।

<u>ताल की कला विधि संकेत</u> –

1.	श अथवा श	शम्भा
2.	ता	ताल
3.	सं	सन्निपात
4.	आ	आवाप
5.	नि	निष्काम
6.	वि	विक्षेप
7	प्र	प्रवेश

जैसे चञ्चत्पुट और चाचपुट में –

	चा	च्च	पु	ट	चा	च	पु	ट
चञ्चत्पुट	S	S	1	S'	S	1	1	S'
कलाविधि संकेत	सं	श	ता	श	सं	श	ता	श

ताल संगीत का मूल उपकरण है; ताल से गीत वाद्य और नृत्य को आधार प्रदान होता है।

सभी तालों की मूल योनि चञ्चपुट तथा चाचपुट है। मूल प्रकार चतुरश्र और व्यश्र है तथा मूल इकाई लघु गुरु है।

स्वर ताल और लय स्वर के मूल तीन उपकरण है । ताल, गीत, वाद्य् और वृत्त को आधार प्रदान कराता है।

भरत के नाट्यशास्त्र (3.1/368–309) में लिखा है।

यस्तु तालं न जानाति न स गाता न वादकः।

तस्मात् सर्वं प्रयत्नेन कार्य तालावधारणम्।।

अर्थात् ताल को न जाने वाला, गायक या वादन कहलाने का अधिकारी नहीं है।

संगीत चूड़ामणि में तालों के 5–5 पर्याय दिये हैं।

द्रुत	–	अर्धमात्रा, द्रुत व्योम, व्यंजन बिन्दुक	–	शम्कू
लघु	–	मात्रिक, सरल, हस्व, लघु, व्यापक	–	गौरी
गुरू	–	द्विमात्रिक, कला, वक्र, गुरु, दीर्घ	–	शिव+गौरी
प्लुत	–	समोद्मव, प्लुत, दीप्त त्रयशं त्रिमात्रिक	–	ब्रह्मा विष्णु महेश

<u>ताल का प्रस्तार</u> – ताल में द्रुत लघु आदि एक अथवा अधिक अवयवों के आधार पर जो अनेक भाग बनते हैं; उन्हें बनाने की विधि प्रस्तार[16] हैं। जैसे एक प्लुत में 3 मात्रा होती हैं। तीन मात्रा में द्रुत, लघु, गरु प्लुत को विभिन्न प्रकार से संयोजन करके उनके अनेक प्रकार बन सकते हैं। उन्हें बनाने की विधि तथा उनकी कुल संख्या 'प्रस्तार' के अन्तर्गत आती हैं; जो निम्नानुसार है।

तालिका–26

1	2	3	6	10	19	33
↓	↓	↓	↓	↓	↓	↓
द्रुत	लघु	सार्ध	गुरु	सार्धद्वि	प्लुत	सार्धत्रि
		$1\frac{1}{2}$		$2\frac{1}{2}$		$3\frac{1}{2}$

उपर्युक्त अंक कुल प्रस्तारों के सूचक है; इनमें से कोई एक अंक जिस अंकों के योग से बनता है उन अंको में बनने वाले प्रस्तारो में क्रम से द्रुतान्त, लध्वनत, गुर्वत और प्लुलन्त के घोतक हैं। 19+10+3+1 = 33 यानि $3\frac{1}{2}$ मात्रा के कुल 33 प्रस्तार में से 19 प्रस्तार द्रुतान्त, 10 लध्वान्त, 3 गुस्वान्त, 1 पलुतान्त होगा।

<u>नष्ट संख्या</u> –

किसी प्रस्तार की संख्या के आधार पर उसका नष्ट यानी अलग स्वरूप जानने की विधि नष्ट हैं या इकानब्बें भेद का क्या रूप होगा ? इस प्रश्न का उत्तर नष्ट से प्राप्त होता है।

उद्रिष्ट –

प्रस्तार के ज्ञात स्वरूप के आधार पर उसकी संख्या निकालने की विधि उद्रिष्ट कहलाती है। किसी अवयव के प्रस्तार में कितने द्रुतहीन और द्रुतयुक्त प्रस्तार हैं, द्रुत मेरु से ज्ञात होते हैं। इसी तरह

लघु मेरु से लघुहीन और लघुयुक्त

गुरू मेरु से गुरूहीन और गुरूयुक्त

प्लुन्त मेरु से प्लुन्त हीन और प्लुप्तयुक्त

संयोग मेरु से किसी अवयव के कुल प्रस्तार की संख्या और उसमें अकेले–अकेले और दो या अधिक अवयवों से बनने वाले प्रस्तारो की संख्या का एक साथ ज्ञान होता है।

खण्डताल –

ताल में एक भेद खण्डताल[16] है। खण्ड का अर्थ भेदन करना टुकड़े करना। इन तालों की रचना मूलतः गुरु आदि की लघु आदि के रूप में खण्डित करके हुई है। अतः वे खण्डताल कहलाते हैं। अर्थात्

गुर्वाद्याश्चतुर श्रादेः खण्ड यित्वा निवेशिताः।।

युद्रा लहवादि खण्डानामा धिक्यमिह हश्यने।

सेनेषां खण्ड तालत्वमभाषन्त पुरातनाः।।

– संगीत रत्नाकर 5, पेज 255–256

राग वागेश्री में कुद छन्दों पर आधारित सरगमें –

स्वर लिपि में बिन्दु तार स्वरों के ऊपर और मन्द्र स्वरों के नीचे और विकृत स्वरों के नीचे आड़ी रेखा (–) का प्रयोग किया गया है। हस्व स्वर अक्षर एक मात्रा के बराबर और दीर्घ अक्षर दो मात्रा के बराबर हैं। लघु–गुरु के चिन्ह केवल एक एक अंश पर लगाये हैं। वागेश्री राग में ग और नि कोमल होते हैं। इसलिये यहाँ चिन्ह नही लगाये जा रहे हैं।

******

राग (Raga)

याऽयं ध्वनिविशेषस्तु स्वरवर्णविभूषितः।

रजंको जनचित्तानां स रागः कथितो बुधैः।।

– अभिनव–रागमजंरी

अर्थात् ध्वनि की उस विशिष्ट रचना को जिसमें स्वर तथा वर्णों के कारण सौंदर्य हो; जो मनुष्य के चित्त का रजंन करे, अर्थात् जो श्रोताओं के मन को प्रसन्न करे। बुद्धिमान लोग उसे 'राग' कहते हैं।

राग[14] में निम्नलिखित बातों का होना जरूरी है।

1. ध्वनि (आवाज) की एक विशेष रचना हो।
2. उसमें स्वर तथा वर्ण हो।
3. रंजकता यानी सुन्दरता हो।
4. राग में कम से कम पाँच स्वर अवश्य होने चाहिये।
5. राग में आरोह तथा अवरोह का होना आवश्यक है क्योंकि इनके बिना राग का रूप पहचाना नहीं जा सकता।
6. किसी भी राग में षड्ज (सा) स्वर वर्जित नहीं होता।
7. मध्यम और पचंम, में दो स्वर एक साथ तथा एक ही समय कभी भी वर्जित नहीं होते।
8. राग में वादी–संवादी स्वर अवश्य रहते हैं। इन स्वरों पर ही विशेष जोर रहता है।

राग के नियमों में वादी, संवादी आदि स्वरों का भी महत्वपूर्ण स्थान होता है।

वादी स्वर को राजा के समान, संवादी स्वर को मंत्री के समान, विवादी स्वर को वैरी

राग (Raga)

याऽयं ध्वनिविशेषस्तु स्वरवर्णविभूषितः।
रजंको जनचित्तानां स रागः कथितो बुधैः।।

– अभिनव–रागमजंरी

अर्थात् ध्वनि की उस विशिष्ट रचना को जिसमें स्वर तथा वर्णों के कारण सौंदर्य हो; जो मनुष्य के चित्त का रजंन करे, अर्थात् जो श्रोताओं के मन को प्रसन्न करे। बुद्धिमान लोग उसे 'राग' कहते हैं।

राग[14] में निम्नलिखित बातों का होना जरूरी है।

1. ध्वनि (आवाज) की एक विशेष रचना हो।
2. उसमें स्वर तथा वर्ण हो।
3. रंजकता यानी सुन्दरता हो।
4. राग में कम से कम पाँच स्वर अवश्य होने चाहिये।
5. राग में आरोह तथा अवरोह का होना आवश्यक है क्योंकि इनके बिना राग का रूप पहचाना नहीं जा सकता।
6. किसी भी राग में षड्ज (सा) स्वर वर्जित नहीं होता।
7. मध्यम और पचंम, में दो स्वर एक साथ तथा एक ही समय कभी भी वर्जित नहीं होते।
8. राग में वादी–संवादी स्वर अवश्य रहते हैं। इन स्वरों पर ही विशेष जोर रहता है।

राग के नियमों में वादी, संवादी आदि स्वरों का भी महत्वपूर्ण स्थान होता है।

वादी स्वर को राजा के समान, संवादी स्वर को मंत्री के समान, विवादी स्वर को वैरी

(दुश्मन) के समान तथा अनुनादी स्वर को सेवक के समान समझना चाहिये।

वादी :

राग में लगने वाले स्वरों में जिस स्वर पर सबसे अधिक जोर रहता है अथवा जिसका प्रयोग अधिक का बार–बार किया जाता है; उसे उस राग का 'वादी स्वर' कहते हैं।

संवादी :

यह वादी स्वर का सहायक होता है; तभी इसे मंत्री की पदवी शास्त्रों ने दी है[18]। यह वादी स्वर से कम तथा अन्य स्वरों से अधिक प्रयुक्त होता है। वादी स्वर के चौथे या पाँचवे नम्बर पर 'संवादी स्वर' होता है।

अनुवादी :

वादी और संवादी के अतिरिक्त जो नियमित स्वर राग में लगने से वे सब 'अनुवादी स्वर' कहलाते हैं।

विवादी :

विवादी का वास्तविक अर्थ तो 'विगाड़ पैदा करने वाला' ही होता है, अर्थात ऐसा स्वर, जिससे राग का स्वरूप विगड़ जाये। इसलिये विवादी को शत्रु (बैरी) की पदवी शास्त्रों में दी गई है।

उत्तर–भारतीय संगीत के दस राग होते हैं; जिनका आरोह–अवरोह नीचे प्रदर्शित है।

राग	राग क आरोह–अवरोह
बिलावल	सा रे ग म प ध नि सां ।
	सां नि ध प म ग रे सा ।।

राग परिचय, प्रोफेसर हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, संगीत सदन प्रकाशन।

संगीत चिन्तामणी – श्रीमती सुमित्री कुमारी, श्रीमती सुलोचना वृहस्पति, वृहस्पति पब्लिकेशन, नई देहली।

यमन	सा	रे	ग	मं	प	ध	नि	सां ।
	सां	नि	ध	प	मे	ग	रे	सा ।।
खमाज	सा	ग	म	प	ध	नि	सां।	
	सां	नि	ध	प	म	ग	रे	सा ।
भैरव	सा	रे	ग	म	प	ध	नि	सां ।
	सां	नि	ध	प	म	ग	रे	सा ।।
पूर्वी	सा	रे	ग	मं	प	ध	नि	सां ।
	सां	नि	ध	प	मं	ग	रे	सा ।।
मारवा	सा	रे	ग	मं	ध	नि	सां।	
	सां	नि	ध	प	मं	ग	रे	सा।।
काफी	सा	रे	ग	म	प	ध	नि	सां।
	सां	नि	ध	प	म	ग	रे	सा।।
आसावरी	सा	रे	म	प	ध	सां।		
	सां	नि	ध	प	म	ग	रे	सा।।
भैरवी	सा	रे	ग	म	प	ध	नि	सां।
	सां	नि	ध	प	म	ग	रे	सा।।
तोड़ी	सा	रे	ग	मं	प	ध	नि	सां।
	सां	नि	ध	प	मं	ग	रे	सा।।

स्वर और समय की दृष्टि से रागों के तीन वर्ग

स्वर और समय के अनुसार उत्तर भारतीय रागों के तीन वर्ग [14] मानकर कोमल तीव्र (विकृत) स्वरों के हिसाब से उनका विभाजन किया गया है।

(1) संधि प्रकाश राग अर्थात कोमल 'रे' और कोमल 'ध' वाले राग ।

(2) शुद्ध 'रे' और शुद्ध 'ध' वाले राग।

(3) कोमल 'ग' और कोमल 'नि' वाले राग।

(1) संधि प्रकाश राग –

इस राग मे कोमल 'रे' और कोमल 'ध' वाले राग आते हैं। इस वर्ग में कोमल 'रे'–ध' के साथ साथ तीव्र 'ग' होना जरूरी है।

दिन और रात्रि की संधि अर्थात मेल होने के समय को संधि काल कहते हैं। प्रातः सूर्योदय से कुछ पहले और शाम को सूर्यास्त से कुछ पहले का समय ऐसा होता है, जिसे न तो दिन ही कह सकते हैं न ही रात्रि ही। इसी समय को संधि–प्रकाश की बेला कहा गया है और इस बेला में जो राग गाये बजाए जाते हैं, उन्हें संधि प्रकाश राग कहते हैं। जैसे–भैरव, कालिगड़ा, भैरवी, पूर्वी मारवा इत्यादि।

(2) शुद्ध 'रे–ध' वाले राग –

'रे–ध' शुद्ध (तीव्र) वाले रागो के गाने बजाने का समय संधि प्रकाश काल के बाद आता है। क्योंकि संधि प्रकाश काल दिन में दो बार आता हैं, अतः इस वर्ग के रागो के गाने का समय भी चौबीस घंटों में दो बार आता है। इसमें कल्याण, बिलाबल और खमाज के राग गाये जाते हैं। इस प्रकार सबेरे सात बजे से दस बजे तक गाए बजाये जाने वाले रागों में शुद्ध मध्यम की प्रधानता रहती है जैसे विलावल, देशकार तोड़ी इत्यादि और शाम के सात बजे से दस बजे तक गाए बजाए जाने वाले रागों में तीव्र मध्यम की प्रधानता रहती है। जैसे यमन, शुद्ध कल्याण, भूपाली इत्यादि।

(3) कोमल 'ग–नि' वाले राग –

इस प्रकार के राग दिन दस बजे से दिन चार बजे तक और रात्रि में दस बजे से चार बजे तक गाए–बजाए जाते हैं। इस वर्ग के रागों की खास पहचान यह है कि उनमें 'ग' कोमल जरूर होगा। चाहे 'रे–ध' शुद्ध हो या कोमल, इस वर्ग के रागों में प्रातः काल आसावरी, जौनपुरी, गांधारी, तोड़ी इत्यादि राग गाए जाते हैं और रात्रि में यमन इत्यादि गाने के बाद जैसे–जैसे आधी रात का समय आता जाता है, बागेश्री, जै जैवंती, मालकौस इत्यादि राग गाए बजाए जाते हैं।

यहाँ पर राग–समय चक्र[14] का चित्र प्रदर्शित है।

चित्र—7

संगीत के दिन-रात

(राग-समय-चक्र)

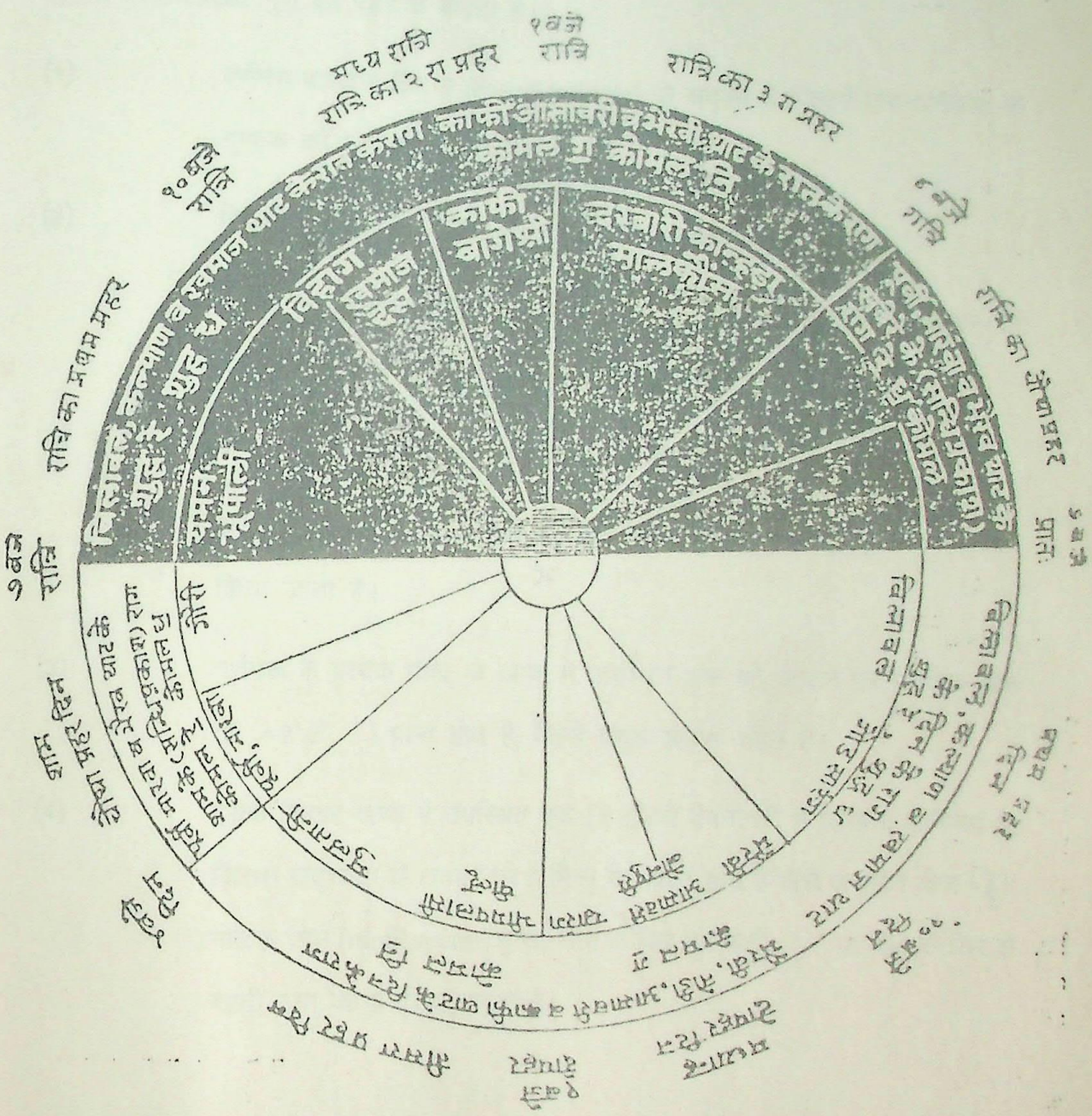

इस चित्र में काला भाग रात्रि का और सफेद भाग दिन का सूचक है।

******

चित्र–7

सगीत के दिन-रात

(राग-समय-चक्र)

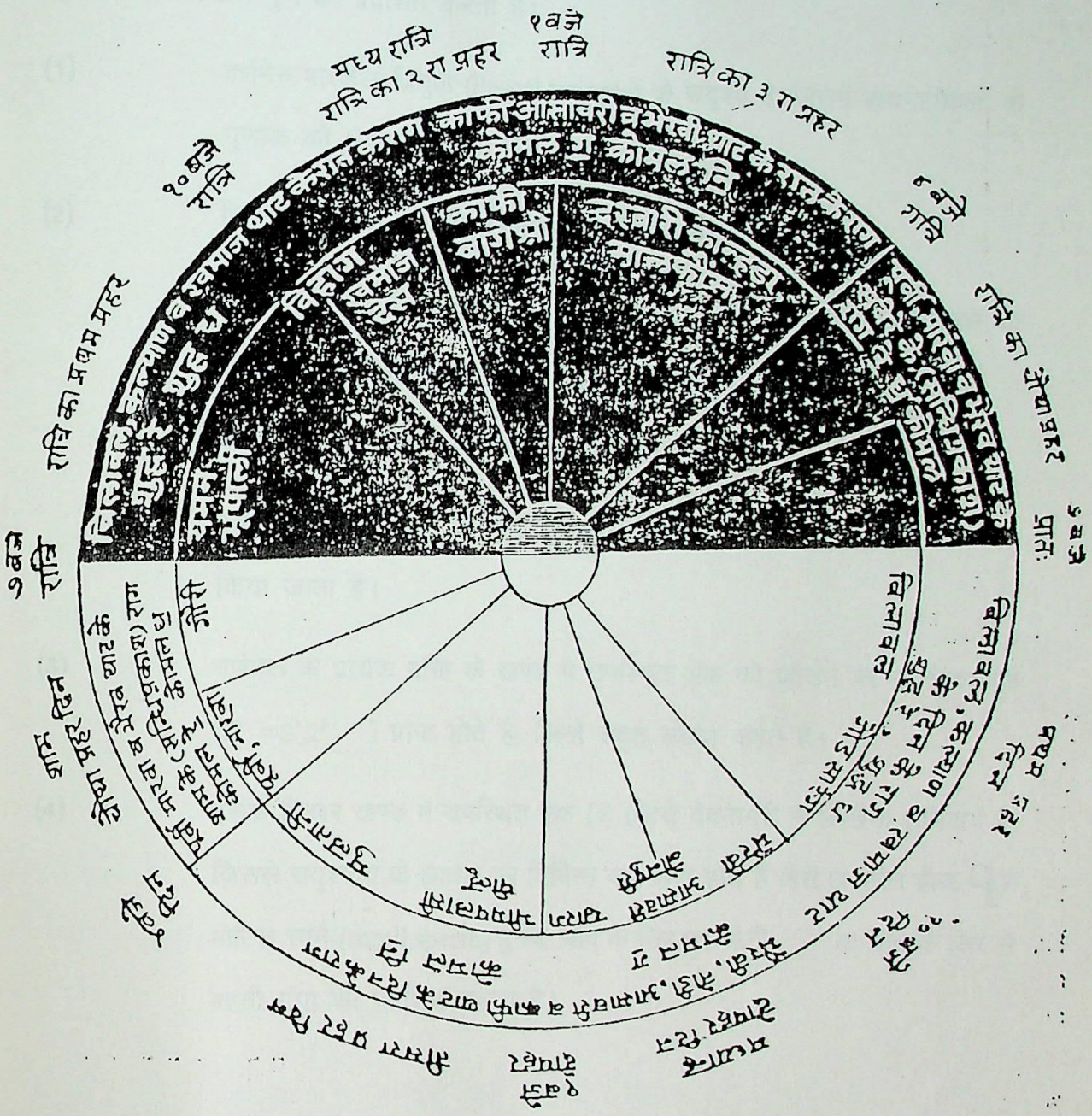

इस चित्र में काला भाग रात्रि का और सफेद भाग दिन का सूचक है।

******

वर्ण मेरु

अग्निपुराण, लीलावती और अन्य पुराणों में वर्णित वर्ण मेरु एक पेस गणितीय[1] यंत्र हैं, जो निम्नलिखित गुण को प्रदर्शित करता है।

(1) वर्णमेरु पास्कल त्रिभुज (Pascal traingle) के सदृश्य है जिसमें बायनामियल[1] के गुणांक को श्रेणीवद्ध किया है।

(2) द्विपद समीकरण को निम्नानुसार वर्णन कर सकते हैं।

अर्थात् $(x-a)^n$ समीकरण में n का मान 0, 1, 2, 3 ..... n रखकर इन गुणांकों का प्राप्त करने के लिये x=a=1मान 2^n से प्राप्त होना है।

जैसे $(1+1)^0=2^0=1$ $(1+1)^1=2(2)$, $(1+1)^2=2^2(4)$

इन गुणांकों को ऊपर से नीचे की ओर चौखानों में चित्र के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है।

(3) वर्णमेरू के प्रत्येक पंक्ति के खण्ड मे उपस्थित अंक को जोड़ने पर उपरोक्त अंक (2^0, $=2^1, 2^2$) प्राप्त होते हैं; जिन्हें संवृत संख्या कहते हैं।

(4) इसके शिखर खण्ड में उपस्थित एक (१) (जिसे देवनागरी में लिखना अनिवार्य हैं; जिससे सदृश्यता के आधार पर विभिन्न रूप प्राप्त होते हैं जैसे अंकुरित बीज १)[1] मोटिल स्पर्म (motil sperm) पुरुष, शिव के सिर पर चोटी [1] या शिव के सिर से बहती गंगा को प्रदर्शित करता है।

चित्र–8

पंक्ति क्रमांक												संवृत संख्या
						स्पर्म						
१						१				१	१	$२^{०}$
२					१	१				१+१	२	$२^{१}$
३				१	२	१				१+२+१	४	$२^{२}$
४			१	३	३	१				१+३+३+१	८	$२^{३}$
५		१	४	६	४	१				१+४+६+४+१	१६	$२^{४}$
६	१	५	१०	१०	५	१				१+५+१०+१०+५+१	३२	$२^{५}$
७	१	६	१५	२०	१५	६	१			१+६+१५+२०+१५+६+१	६४	$२^{६}$
८	१	६	२१	३५	३५	३५	२१	६	९	१+६+२१+३५+३५+२१+६+९	१२८	$२^{७}$

वर्णमेरु
(द्विपद प्रमेय)

<u>वर्ण मेरु के स्वरूप का विस्तार</u> :

वर्ण मेंरु के अंतर्गत तीन मेरु है।

(1) द्विपद गुणांक मेरु (वर्णमेरू का स्वरूप)

(2) खण्ड मेरु (नाम रूप है; जिसमें क्रमंचय संचय प्राप्त होता है)

(3) बसुन्धरा मेरु (डिजिटल अंक)

इन मेरुओं का वर्णन निम्नानुसार है।:–

(1) **<u>द्विपद गुणांक मेरु (वर्णमेरु का स्वरूप)</u>** : (Binomial Theorem) :-

द्विपद अर्थात् वह व्यंजक जिसमें दो पद हों । पहला पद x और दूसरा पद a है। तब (x+a) द्विपद होता है। इसमें ये (x=0,1,2,3----) रखकर क्रमशः प्रसार करते हैं; जो निम्न प्रकार से होता है।

चित्र–9

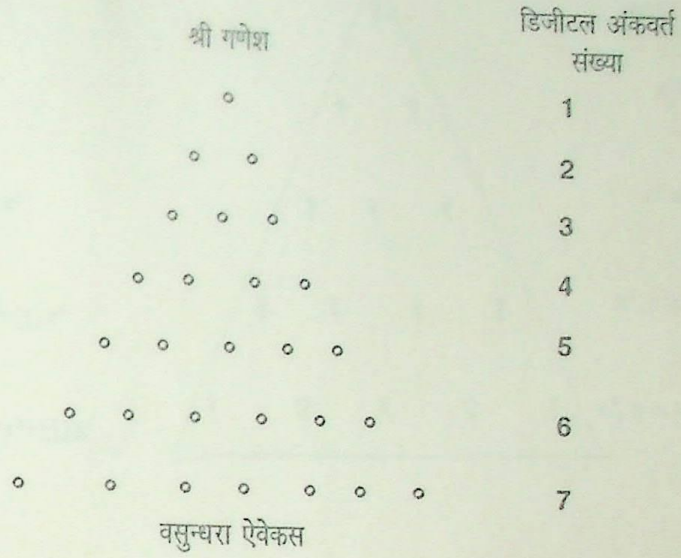

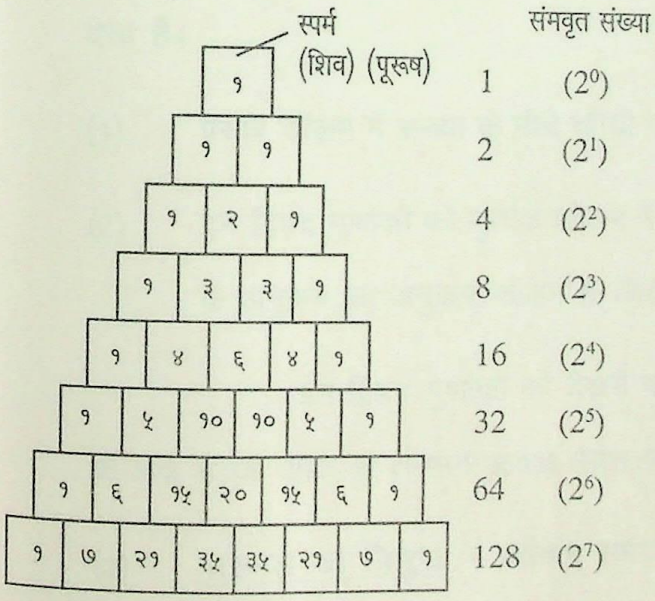

वर्ण मेरु[२०]
(द्विपद)
(Binomial)

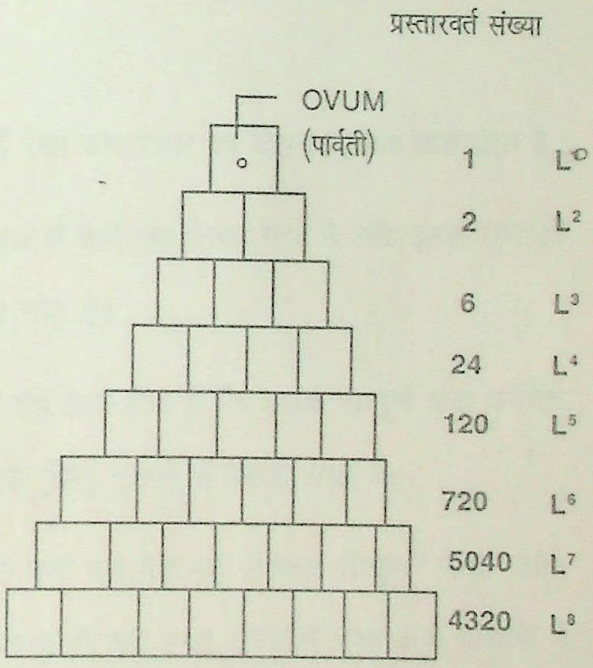

खण्ड मेरु[२०]
(क्रमंचय संचय)
(Permetation Combinations)

चित्र–9

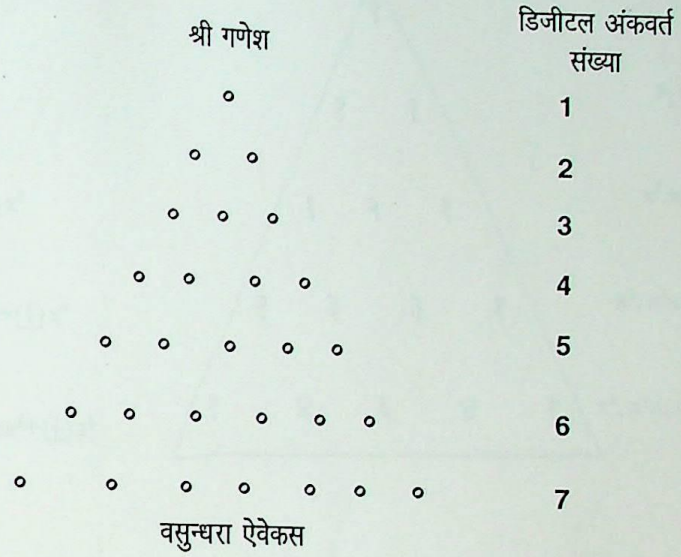

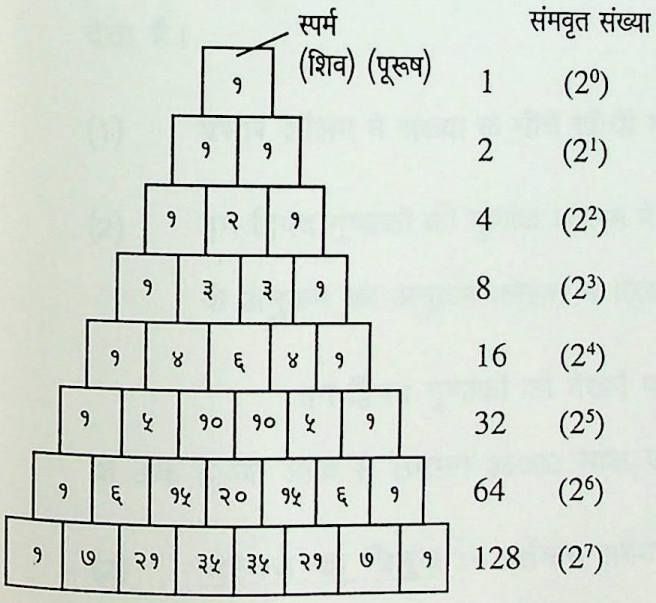

वर्ण मेंरु[२०]
(द्विपद)
(Binomial)

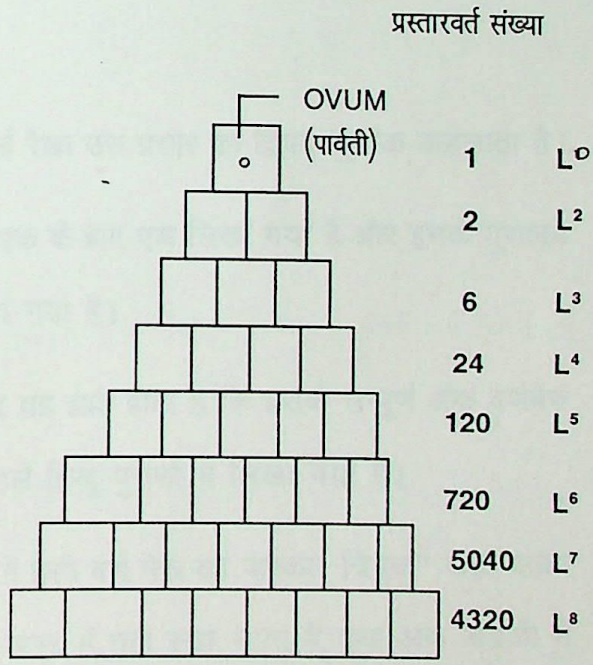

खण्ड मेरु[२०]
(क्रमंचय संचय)
(Permetation Combinations)

चित्र–10

$(x+a)^0$	1	१	
$(x+a)^1$	$\underline{(1)}x+\underline{(1)}a$	१ १	x_1+a
$(x+a)^2$	$\underline{(1)}\,x^2+\underline{(2)}\,x\,a+\underline{(1)}\,a^2$	१ २ १	x^2, xa, a^2
$(x+a)^3$	$\underline{(1)}\,x^3+\underline{(3)}\,x^2\,a+\underline{(3)}\,xa^2+\underline{(1)}\,x^3$	१ ३ ३ १	x^3, x^2a, xa^2a^2
$(x+a)^4$	$\underline{(1)}\,x^4+\underline{4}\,x^3\,a+\underline{6}\,x^2a^2+\underline{4}\,xa^3+\underline{(1)}\,a^4$	१ ४ ६ ४ १	$x^4, x^3a, x^2a^2\,xa^3a^4$

उपर्युक्त सारणी में (x+a) का अलग अलग प्रसार किया गया है; जो निम्न निष्कर्ष देता है।

(1) प्रसार कॉलम में संख्या के नीचे खीचीं गई रेखा उस प्रसार का द्विपद गुणांक कहलाता है।

(2) इन द्विपद गुणांकों को गुणांक कॉलम में एक के बाद एक लिखा गया है और इनके गुणांकों के अनुक्रम को अनुक्रम कॉलम में लिखा गया है।

इन द्विपद गुणांकों को देखने पर यह ज्ञात होता है कि इसके सम्पूर्ण अंक वर्णमेरु के अंक हैं जो आज से लगभग 35000 साल पहले हिन्दु पुराणों में लिखा गया है।

(2) <u>पास्कल का त्रिभुज</u> :– वर्तमान समय में इसी वर्ण मेरू को पास्कल त्रिभुज[19] कहा जाता है लेकिन इसमें संख्याओं को वर्णमेरु के समान खण्ड में नहीं रखा जाता है तथा अंक अंग्रेजी में भी लिखे जाते हैं। इसे भी $(x+a)^n$ के प्रसार में विभिन्न पदों के गुणांकों का निम्नानुसार भी दर्शाया जाता है।

चित्र–11

१	१
१ १	१ १
१ २ १	१ २ १
१ ३ ३ १	१ ३ ३
१ ४ ६ ४ १	१ ४ ६ ४ १
१ ५ १० १० ५ १	१ ५ १० १० ५ १
१ ६ १५ २० १५ ६ १	१ ६ १५ २० १५ ६ १
१ ७ २१ ३५ ३५ २१ ७ १	१ ७ २१ ३५ ३५ २१ ७ १

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि :

(1) प्रत्येक पंक्ति में (Row) प्रारम्भ और अंत के गुणांक (अर्थात् 1) हैं; जो कि वर्ण मेरु के समान हैं।

(2) प्रथम और अन्तिम गुणांकों को छोड़कर अन्य बीच के गुणांक ऊपर की पंक्ति के दो गुणांक (बायें एवं दाये) के योग से प्राप्त होता हैं।

इससे मेरु (पर्वताकार) प्राप्त होता है। जब अंक एक के लिये एक ईंट, 2 के लिये दो इंटों आदि को समान दूरी पर रखा जाये। इसके बाद ईंटों के ऊपरी सिरों को वक्र रेखा से जोड़ने से मेरु प्राप्त होता है।

वर्णमेरु की पंक्ति क्रमांक पांच को लेकर निम्नानुसार मेरु प्रस्तुत है। (देखिये चित्र 1)

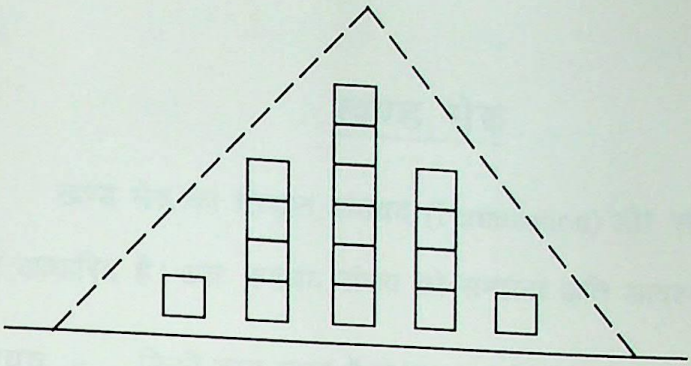

चित्र–12

मेरु का उपयोग जीव विज्ञान[1] आदि विषयों में किया जाता है; इसका दूसरा स्वरूप जो इन विषयों के अतिरिक्त कम्प्यूटर परिपथ की रचना करने में उपयोगी है; जो संगीत के सिन्थजाइजर में प्रयोग में लाया जाता है। (देखिये चित्र[21])

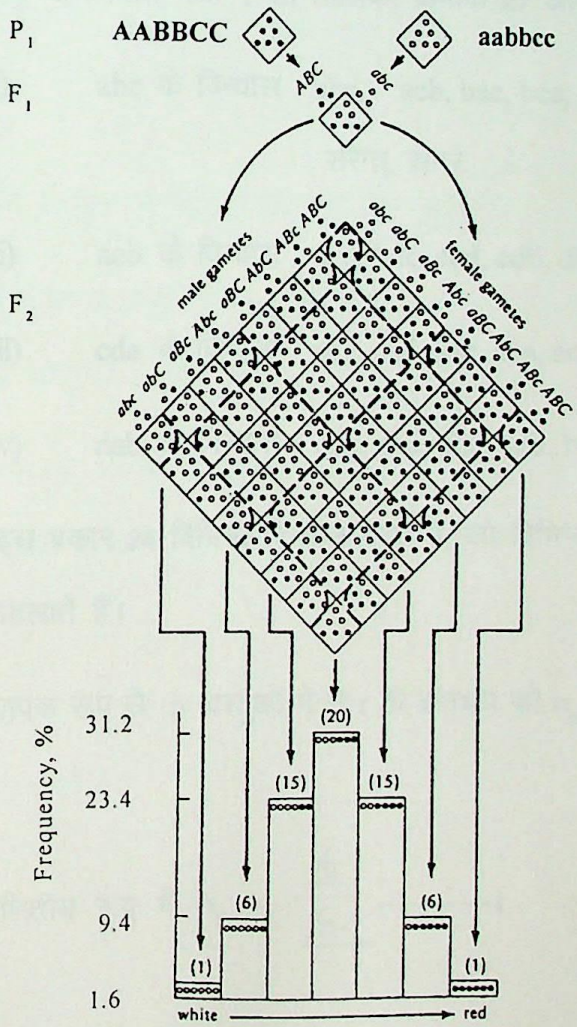

चित्र–13

******

खण्ड मेरु

खण्ड मेरु का सिद्धांत क्रमचय (Permutation) और संचय (Combination) के सिद्धांत[22] पर आधारित है। अतः क्रमचय संचय को समझना अति आवश्यक है।

(1) **क्रमचय** :– किसी वस्तु समूह में से एक बार में कुछ या सभी अवयवों को लेकर जितने भिन्न भिन्न बनते है; उनमें से प्रत्येक क्रमचय कहते हैं।

माना चार अक्षर a, b, c, d दिये गये हैं; इनमें से तीन तीन अक्षरों को एक साथ लेकर विचित्र विन्यास बनाते हैं। स्वाभाविक है कि वे निम्नलिखित होंगे; उन्हें सरगम में भी विन्यास बनते हैं; जो साथ में नीचे दिया गया । जो तालिका क्रमांक 27 आगे अध्याय में दिया गया है।

(i) abc के विन्यास : abc, acb, bac, bca, cab, cba

सरेगा, सगरे

(ii) acb के विन्यास : acd, bdc, cbd, cdb, dbc, dcb

(iii) cda के विन्यास : cda, cad, dac, dca, acd, adc

(iv) dab के विन्यास : dab, dba, abd, adb, bda, bad

इस प्रकार 24 विभिन्न विन्यास बनते हैं; जो विभिन्न 4 समूहों के हैं; ये विभिन्न विन्यास क्रमचय कहलाते हैं।

व्यापक रूप से n वस्तुओं में से r के क्रमचय को n_{pr} (एन पी आर) द्वारा दर्शाया जाता है।

गणितीय रूप में $n_{p_r} = \frac{\angle n}{\angle n-r}$ ----------1

जहां $\underline{/n}$ (फेक्टोरियल एन) = 1.2.3.4 ..... (n-1)-n

इसी तरह $\underline{/n-r}$ को फेक्टोरियल (एन–आर) है।

अतः उपर्युक्त विस्तृत विन्यास को समीकरण (1) के द्वारा आसानी से ज्ञात किया जा सकता है।

अतः चार अक्षर के तीन अक्षर a,b,c,d के विन्यास में,

$n = 4$

$r = 3$ से ज्ञात करते हैं।

$$4_{p_3} = \frac{\underline{/4}}{\underline{/4-3}} = \frac{4x3x2x1}{\underline{/1}} = \frac{4x3x2x1}{1} \text{ (समी. 1 में मान रखने पर)}$$

= 24 विन्यास

जो उपर्युक्त में विस्तृत विधि से प्राप्त हुये थे।

इस प्रकार समी. (1) से आसानी से n और r के अलग अलग मान रखकर कुल विन्यास की संख्या आसानी से ज्ञात कर सकते हैं।

संचय (Combination) :– किसी वस्तु समूह में से एक बार में कुछ अथवा सभी बस्तुएँ लेने पर जो विभिन्न समूह बनते हैं; उनमें से प्रत्येक को संचय कहते हैं । इसमें बस्तुओं के क्रम पर ध्यान नहीं दिया जाता ।

यदि n वस्तुओं में से r वस्तुओं को एक साथ लिया जाय तो बने संचयों की संख्या को n_{cr} से प्रदर्शित करते हैं।

$$n_{c_r} = \frac{n_{p_r}}{\underline{/n}} = \frac{1}{\underline{/r}} x\, n_{p_r}$$

$$\boxed{n_{c_r} = \frac{1}{\underline{/r}} \frac{\underline{/n}}{\underline{/n-r}}} \text{ ——— (2)} \qquad \text{(समी. 1 से } n_{p_r} = \frac{\underline{/n}}{\underline{/n-r}}\text{)}$$

अतः उपर्युक्त सूत्र से हम अभीष्ट संचयों की सख्या ज्ञात कर सकते हैं।

खण्ड मेरु

खण्ड मेरु[22] सरगम के स्वर लिपि बनाने के लिये विभिन्न क्रमचंम संचय का उपयोग करते हैं। वर्ण मेरु से खण्ड मेरु प्राप्त करने के लिये उसमें उपस्थित कोष्ठक की संख्या का योग प्राप्त किया जाता है। वर्णमेरु और खण्ड मेरु की तुलना करने से स्पष्ट हैं कि दोनों का स्वरूप एक सा है किन्तु नाम अलग अलग है; केवल शिखर पर 1 के स्थान पर 0 लिखा हुआ है तथा इसी कारण उसे खण्ड मेरु कहा गया है। जिस तरह गर्भवती माता विखण्डित होकर पुत्र को जन्म देती है इसी प्रकार $\square^1$ को विकर्णीय (digonally) खण्डित किया जाये $\square$ (फेक्टोरियल $\underline{|o}$)[1] और नीचे ऊपर से देखने पर फेक्टोरियल (गणितीय रूप) का प्रतीक प्राप्त होता है। इसी तरह माता का प्रतीक ओवम् (OVAM) होता है; जो गर्भाशय में रहता है एवं 0 के आकार का होता है अतः $\underline{|o}$ (फेक्टोरियल 0) बराबर 1 हुआ अतः $\underline{|o} = 1^1$ अतः वर्णमेरु को और खण्ड मेरु को पहचानने के लिये शिखर पर 1 की जगह 0 का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार $\square$ को खण्डित करने के आधार पर इसे खण्डमेरु कहा गया है। अर्थात् उसके अन्दर लिखे गये अंकों की कोई मान्यता नहीं रह जाती है; यह समझकर खण्डमेरु निम्नानुसार बनता है।

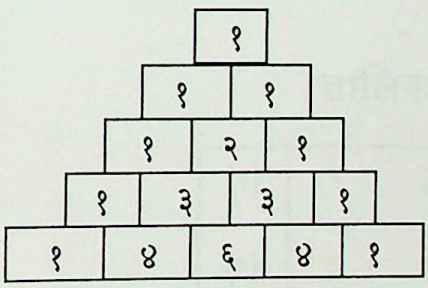

खण्ड मेरू

बसुन्धरा के अनुसार

1	/0	1
2	/2	2
3	/3	6
4	/4	24
5	/5	120

कुल चौकोनों की संख्या
(कुल क्रमंचय संचय)

चित्र–14

अतः खंडमेरु में एक के स्थान पर शून्य रखा गया है। यह शून्य अंडे, बीज, फल आदि के सदृश्य रूप हैं अर्थात् स्त्री लिंगी है। वर्णमेरु तथा खण्ड मेरु शिव पार्वती स्वरूप है। इसलिये वर्णमेरु अद्वैत रूप में अर्द्धवारेश्वर स्वरूप होता है।

o = बीज

चित्र–15

खण्ड मेरु

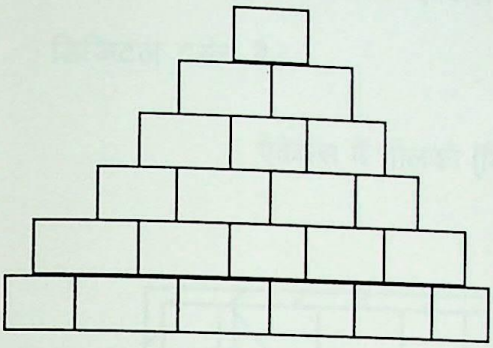

	कूटताना प्रस्तार		तान
/0	1	सा	प्राचीन आर्थिक तान
/2	2	सारि/रिसा	प्राचीन गायिक तान
/3	6	(सारिग/सागरि/रिगस), (रिसग/गसरि/गरिस)	प्राचीन सामिक तान
/4	24 →	सरिगम सरिमग सगमरि रिगमस	
/5	120	रिसगम रिसमग गसमरि गरिमस	
/6	720	गसरिम मसरिग मसगरि मरिगस	प्राचीन स्वरांतर तान
		रिगमसम रिमसग गमसरि गमरिस	
		मरिसम मरिसग मगसरि मगरिस	

ओडव तान

आडव तान

खण्ड मेरु में 4 स्वरों का प्रस्तार[23] क्रमचंय संचय निमय के प्रयोग से करते हैं; इसमें चार स्वर 1, 2, 3, 4 में से 4 संख्या के स्वर को स्थिर करके तीन स्वर 1, 2, 3 का क्रमंचय संचय करते हैं; जो निम्नांकित हैं।

तालिका–27

(1)	1	2	3	4
(2)	2	1	3	4
(3)	1	3	2	4
(4)	3	1	2	4
(5)	2	3	1	4
(6)	3	2	1	4

******

श्री वसुन्धरा मेरु

श्री वसुन्धरा मेरु श्री गणेश की स्थापना के समय दीवाल पर अंकित किया जाता है। इसलिये इसे श्री कर्मकाण्ड में गणेश वसुन्धरा कहा गया है। वसुन्धरा में उपस्थित बिन्दु, उपस्थित संख्या ज्ञात करने के लिये ऐवेकस (चित्र नं.9) कॉस्मिक निमुरल[1] (Cosmic nemural) का डिजिटल वर्सन है।

ऐवेकस में गोलकों (बिन्दु) को तार में पिरोकर एक फ्रेम में स्थापित किया जाता है।

चित्र–16

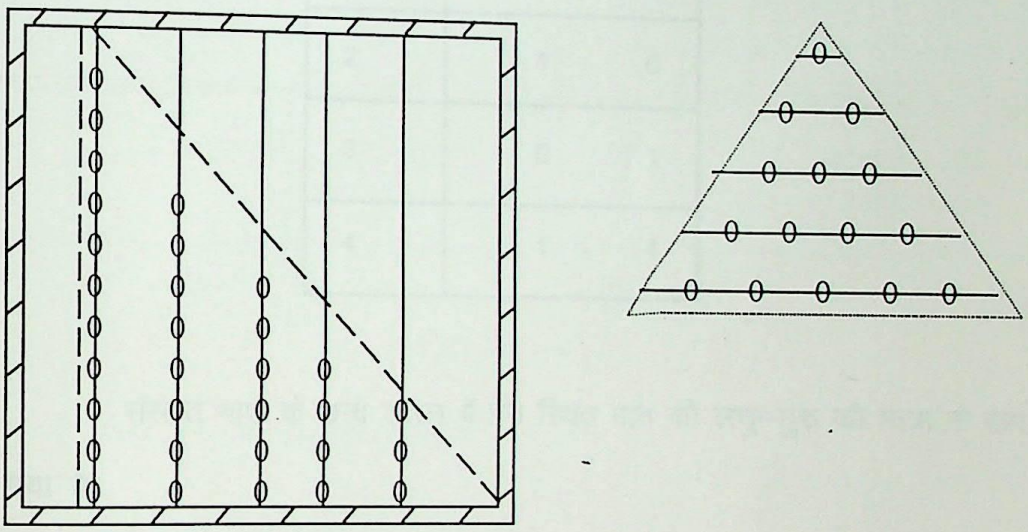

एवेकस् आम तौर पर बालकों को संख्या ज्ञान करने के लिये बचपन में सिखाया जाता है। जापान में इसे शीघ्र गति से जोड़ने घटाने के लिये उपयोग में लाया जाता है।

श्री वसुन्धरा का अर्थ आकाश गंगा के मध्य में स्थित (ब्लेक होल) कृष्ण विवर अथवा श्याम विवर हैं; जिसे वैदिक शास्त्र में पृथ्वी कहा गया है। यह पृथ्वी मानस रूप होने के कारण अपनी पृथ्वी तथा शरीर में पंच भूतों वाली पृथ्वी भी कहा गया है।

इसी कारण ऐवेकस् को कॉस्मिक न्यूमरेल कहा गया है।

******

वर्ण मेरु के तीनों स्वरूप संगीत तथा छन्द शास्त्र में

वर्ण मेरु के स्वरूप का उपयोग छन्द शास्त्र में किया जाता है; जिसका आधार कम्प्यूटर विज्ञान है।

इसके अंक को Place value (स्थित मान) के अनुसार भी लिखा जाता है।[24] यह निम्नानुसार हैं।

तालिका–28

1	0 0
2	1 0
3	0 1
4	1 1

संस्कृत भाषा के छन्द शास्त्र में इन स्थित मान को लघु–गुरु की मात्रा के रूप में लिखा गया है।

तालिका–29

लघु	I	1	high
गुरु	S	0	low

इन लघु–गुरु का वर्णन अग्नि पुराण में मिलता है। छन्द शास्त्र के लघु–गुरु की नष्ट प्रस्तार को प्रो. एम. के. दवे जी ने अपने प्रस्तुति[1] में आधुनिक कम्प्यूटर की शून्य,(O_s तथा 1_s) एक की भाषा में परिणित किया है; जो निम्नानुसार है।

तालिका–30

वर्ण मेरु में वाइनरी कोड्स[1] :–

एकाकक्षर (एक अक्षर का समुच्चय)

क्रमांक	छन्द शास्त्र में	गणितीय रूप में LED पर (Light Emitting Diodes	वोल्टेज कोड (Voltage Code)	चुम्बकीय धारा के द्वारा कोट में फलक्स
1	S (गुरू)	0 (off)	Low	दक्षिणावर्त दिशा (Counter Clock wise)
2	I (लघु)	1 (ON)	High	बामावर्त दिशा (Clock wise)

तालिका–31

वर्ण मेरु से वाइनरी कोड्स[24] :–

एकाकक्षर (एक अक्षर का समुच्चय)

क्रमांक	डेसीमल नम्बर	छन्द शास्त्र में	बाईनरी कोड में	निवेशी परिपथ की संख्या
1	0	S S	0 0	2 (दो) (2 Bits)
2	1	I S	0 1	
3	2	S I	1 0	
4	3	I I	1 1	

(क. ट. प. संख्या शास्त्र में 0 1 को S I लिखने की अपेक्षा उलटकर लिया जाता है। अर्थात् 0 1 – I S)

तालिका–32

त्रयाक्षर प्रस्तार :–

क्रमांक	निवेशी परिपथ की संख्या	देवता गण	डेसीमल नम्बर	छन्द शास्त्र में	छन्द शास्त्र में	बाइनरी कोड
1.		पृथ्वी	0	S S S	सा गा मा, गा मा धा, मा धा नी, धा नी सा,	0 0 0
2.	3 (तीन)	जल	1	I S S	स गा मा, ग मा धा, म धा नी, ध नी सा	0 0 1
3.	(3 Bits) या (3 गण)	अग्नि	2	S I S	नी स नी, सा गि सा, गा म गा, धा नि धा,	0 1 0
4.		वायु	3	I I S	स म गा, म ग धा, म ध नी,, ध नि सा	0 1 1
5.		गगन	4	S S I	गा गा स, सा मा ग, धा धा ग, मा धा ग	1 0 0
6.		सूर्य	5	I S I	सा मा ग, सा मा गा, म धा म, ध नी स	1 0 1
7.		छन्द	6	S I I	सा म ग, गा म ग, मा ध म, धा नी स	1 1 0
8.		नक	7	I I I	स म ग, ग म ध, म ध न, ध न स	1 1 1

इसमें से स रे ग म के लिये गायत्री (octal system) का उपयोग किया जाता है[1]; जो खण्ड मेरु के अन्तर्गत वर्णित किया जा चुका है।

उपर्युक्त एकाक्षर, द्वयाक्षर और त्रयाक्षर आदि कम्प्यूटर में बिट तथा बाईट्स के रूप में उपयोग में लाया जाता है। इसका उपयोग कम्प्यूटीकृत संगीत[24] सिंथेसाइजर के हार्डवेयर में किया जाता है।

चित्र–17

वर्ण मेरु और खण्ड मेरु का वैदिक विज्ञान में उपयोग[1] :–

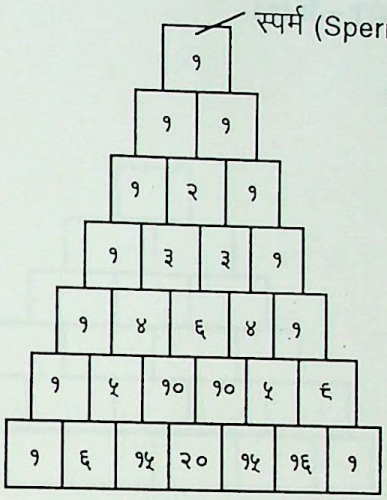

संवृत संख्या	
1	(2^0)
2	(2^1)
4	(2^2)
8	(2^3)
16	(2^4)
32	(2^5)
64	(2^6)

(1) वर्ण मेरु में प्रत्येक अंक को एक वर्ग (चौकोर) में लिखा जाता है; इसमें लिखे अंक बायनोमियल के गुणांक दर्शाते हैं और इन अंकों को पंक्तिबद्ध जोड़ने पर समवृत संख्या प्राप्त होती है।

(2) इसी चौकोणीय के ऋग्वेद में पृथ्वी को चौकोंणीय तथा विस्तीर्ण बताया गया है। यही ब्लेक होल, यही वसुन्धरा आदि के विराट रूप[1] में सिद्ध है।

चित्र–18

श्री गणेश का श्री वसुन्धरा	डिजिटल अंक वृत संख्या
०	1
० ०	2
० ० ०	3
० ० ० ०	4
० ० ० ० ०	5
० ० ० ० ० ०	6
० ० ० ० ० ० ०	7

(वसुन्धरा एबेकस)

(3) संगीत शास्त्र में वर्णमेरु (ताल के अंतर्गत) तथा खण्ड मेरु का उपयोग संगीत रत्नाकर में वर्णित है। खण्ड मेरु तथा श्री वसुन्धराः वर्णमेरु में ही निहित है।

चित्र–19

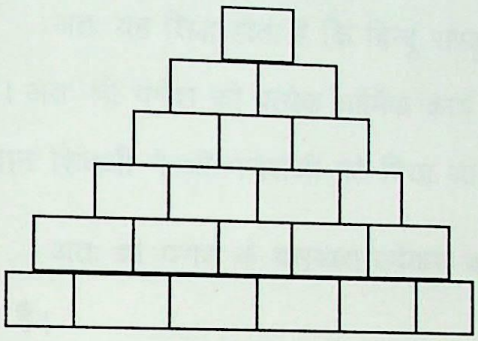

कुल चौकोनों की संख्या	(कुल क्रमचंय संचय)	
1	$\lfloor 0$	= 1
2	$\lfloor 2$	= 2
3	$\lfloor 3$	= 6
4	$\lfloor 4$	= 24
5	$\lfloor 5$	= 120
6	$\lfloor 6$	= 720

खण्ड मेरु

(4) वर्ण मेरु और खण्ड मेरु में उपस्थित चौकोण सूक्ष्म स्तर पर कोई भी स्वरूप ले सकता है, यह गोलाकार भी हो सकता है। जैसा कि हमारे शरीर की कोशिकाऐं हैं।

(5) वर्ण मेरु में यदि हम सिर्फ चौकानों' की गणना करें तो वह खण्ड मेरु और श्री वसुन्धरा का रूप ले लेता हैं; जिसमें प्रकृति अंक (डिजिटल) के स्वरूप को समझने में सहायक है। केल्कुलेटर के आने के पूर्व से ही जापान में इसका (वसुन्धरा) प्रयोग गुणा भाग आदि गणनाओं में किया जाता था।

(6) वर्ण मेरु में उपस्थित शिखर चौकोण में एक (1) मोटिल स्पर्म (Motile Sperm) (पुरूष, शिव) को प्रदर्शित करता है।

(7) वसुन्धरा में उपस्थित डाट, उपस्थित संख्या को ज्ञात करने के लिये एवेकस (Table No.) के कॉस्मिक निमुरल (Cosmic nemural) का डिजिटल वर्सन है।

(8) वर्ण मेरु के शिखर खण्ड $\boxed{9}$ खण्ड मेरु के अर्द्ध चौकोण ($\lfloor 0 = \boxed{9}$) के बराबर होता है।

(9) छन्द शास्त्र के अनुसार इन चौकोण और अर्द्ध चौकोण को बाइट कहा जाता है। (2^6 = 64 जो लगभग 66 हो सकता है; जिसे ब्राह्मी त्रिस्टुप् (Brahmi Trishtupa) कहते हैं।)

(10) वर्ण मेरु में उपस्थित संमवृत संख्या को श्री गणेश के डीजिटल वसुन्धरा में एकाक्षर संख्या के साथ बिट (Bits) के रूप मे प्रदर्शित किया जाता है।

अतः यह सिद्ध होता है कि हिन्दु संस्कृति में शिव या पार्वती से श्री गणेश को श्रेष्ठ माना गया है। अतः श्री गणेश की प्रत्येक धार्मिक कार्य के प्रारम्भ में सबसे पहले पूजा की जाती है; जिसका वरदान शिवजी ने श्री गणेशजी को दिया था।

अतः श्री गणेश के वसुन्धरा एबेकस को चित्र में वर्ण मेरू और खण्ड मेरू के शीर्ष में रखा गया है।

******

वर्णमेरु के अनुसार सिन्थेसाईजर के ग्राफ का स्पष्टीकरण

भौतिक शास्त्रानुसार संगीत के मुख्य आयामों का वर्णन करने के पश्चात् शास्त्रीय शिखा निरूपण का विखण्ड दिया जा चुका है तथा उसमें वर्ण मेरु के गणित संवृत संख्याओं तथा श्री वसुन्धराः (Digital) मेरु का स्वरूप भी दिया जा चुका है।

वर्ण मेरु यह भी प्रदर्शित करता है कि छन्द शास्त्र कम्प्यूटर विज्ञान ही है। संगीत के विश्लेषण में इनसोनिक (ENSONIQ) के उपकरण का उपयोग किया गया है; जिसमें पेरिस (PARIS) साफ्टवेयर का उपयोग किया गया है।

पेरिस पी.सी.आई कार्ड (PARIS P. C. I. CARD) :-

1. इसमें 24 बिट आडियो का 16 ट्रेक का प्लेबेक और रिकार्ड होता है; इसमें ताल स्वर अथवा तार के वाद्य यंत्र तथा हारमोनियम के अंतरालों के लिए तरंग रूप प्राप्त किया जाता है; जिसके प्रत्येक आवृत्ति के लिए घड़ी (समय) को दर्शाया जाता है। (चित्र 20 से)

2. इसमें प्रक्रिया के उपयोग हेतु 24 बिट प्रोसेसिंग युनिट है; जिसके 64 पेरामीटर की एक साथ विभिन्न प्रक्रियाओं के नियंत्रित किया तथा एक साथ 16 भावों का एक साथ परीक्षण प्राप्त हो सकता है।

3. इसमें पेरिस इंटरफेस 20 बिट रिवाल्यूवेसन कन्वरटर के साथ निम्न (low) अथवा उच्च (High) ध्वनि का परिपथ (Circuitry) के माध्यम से आडियो सिग्नल को बिना डिस्टॉरसन (Distortion) के नियंत्रित किया जा सकता है; इसका इन्टरफेस 4–एनालॉग इनपुट तथा 4– एनालॉग आऊटपुट के साथ घड़ी को सिन्क्रोनाईज (Synchronize) करने की क्षमता है। इसे ग्राफ के माध्यम से परखा गया है। (चित्र 20 से)

साधारण बाद्य् में ताल, स्वर, राग की लिपि जो बोल के लिये बनाई जाती है; उसमें इनका मेल नहीं होता। जैसे देखा जाता है कि स्वर से मेल के लिये तबला बादक गान शुरू होने के पहले स्वर से मेल ताल से करता है; इसमें काल की गणना करने में त्रुटि संभव है।

किन्तु अब इलेक्ट्रानिक उपकरण के माध्यम से स्वर ताल लय आदि का अलग अलग ट्रेकिंग (treking) कर लिया जाता है। आवश्यक होने पर कोई भी प्रक्रिया की गति को कम या अधिक किया जा सकता है तथा सुर को मध्यम या ऊँचा किया जाता है। इस प्रक्रिया के करने के समय इसे graph के रूप में प्रिन्ट आउट भी निकालते हैं; जिसमें काल तथा आवृत्ति (frequency) एक साथ प्राप्त होती है। इसके ताल, स्वर तथा दोनों ताल मेल का ग्राफ प्राप्त किया गया जो यहाँ प्रस्तुत है।

ANALYSIS OF GRAPH :

चित्र में राग के सिन्थेसाइजर द्वारा तरंग रूप प्रदर्शित किया गया है; इसमें स्वर, ताल, राग के अंश क्रमशः 1/10 सेकेण्ड, 10 सेकेण्ड, 20 सेकेण्ड, 30 सेकेण्ड के लिए गये हैं।

इस प्रयोग को सीमित करना अनिवार्य था क्योंकि पूर्ण राग के सिन्थेसाईजर के ग्राफ में व्यर्थ व्यय करने पर भी वही निष्कर्ष निकलता है; जो कि पूरे ग्राफ को रेखांकित करने से हो सकता था। अतः छोटे रूप में अध्ययन करके या जरूरी समझा जाए तो उसे पूर्ण रूप से भी अध्ययन किया जा सकता है। इस प्रयोग में यमन राग का गीत लिया गया है। इस गीत के बोल लिपि ताल के अनुसार निम्न है।

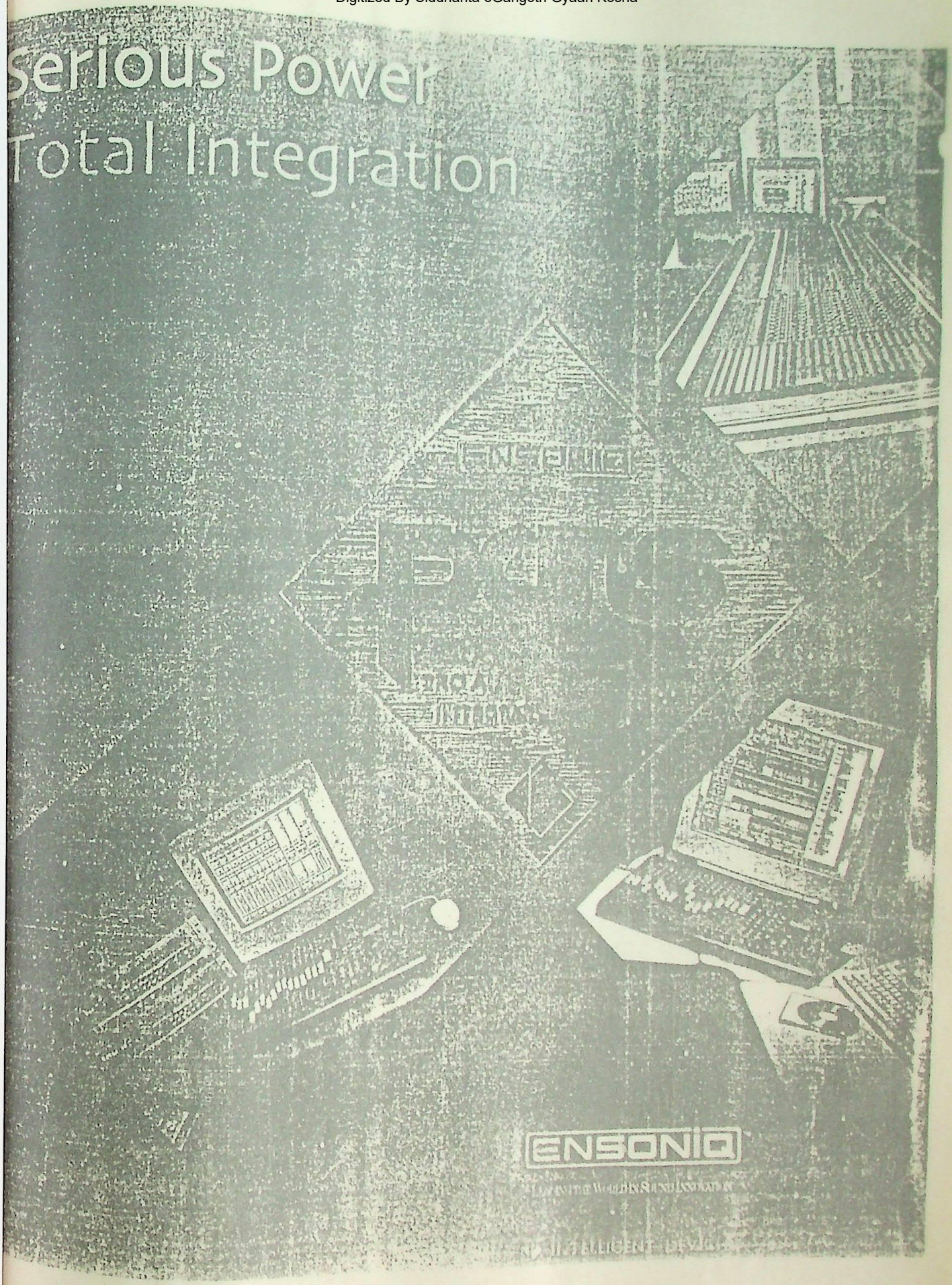

चित्र २० (अ)

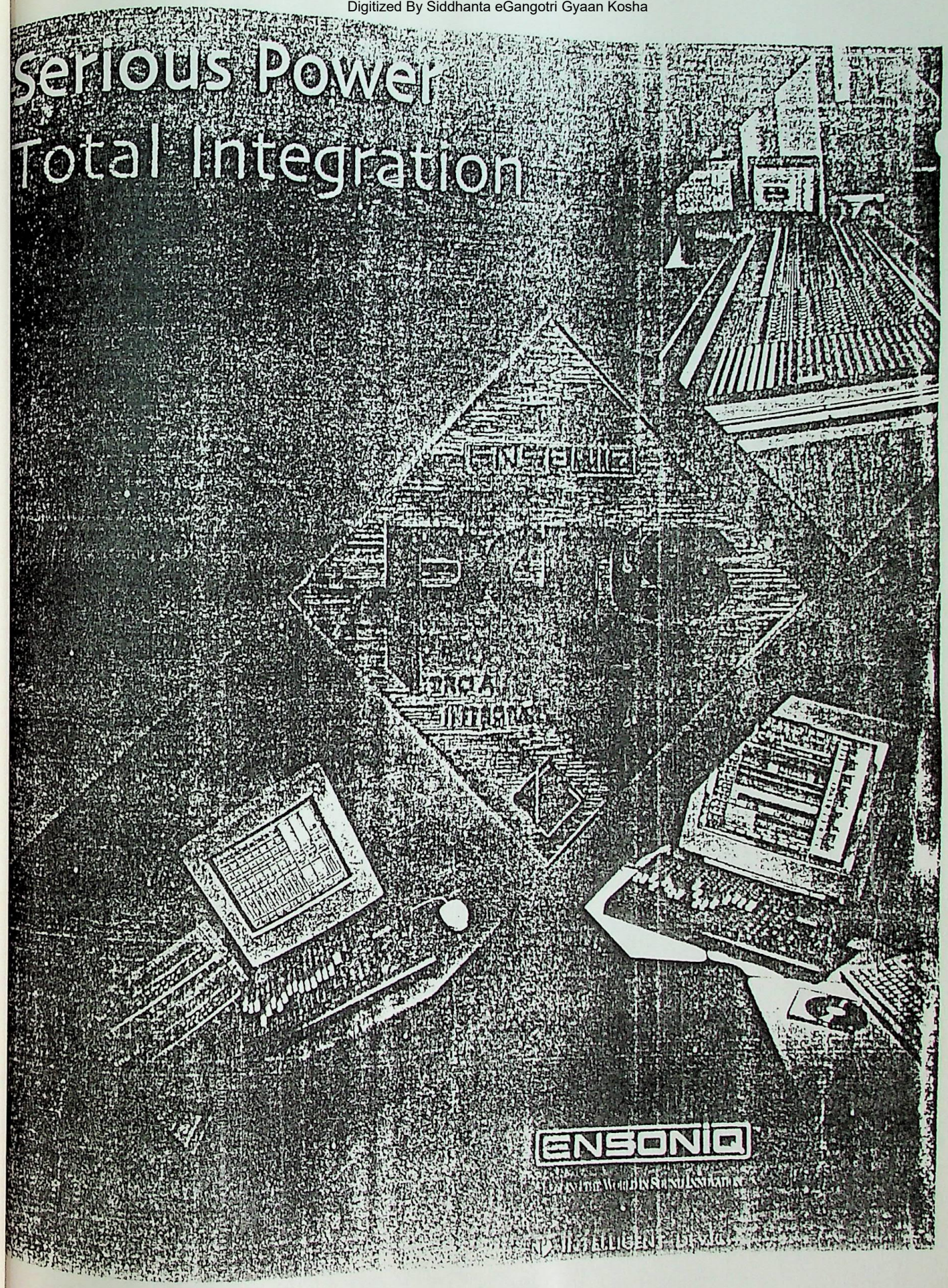

चित्र २० (अ)

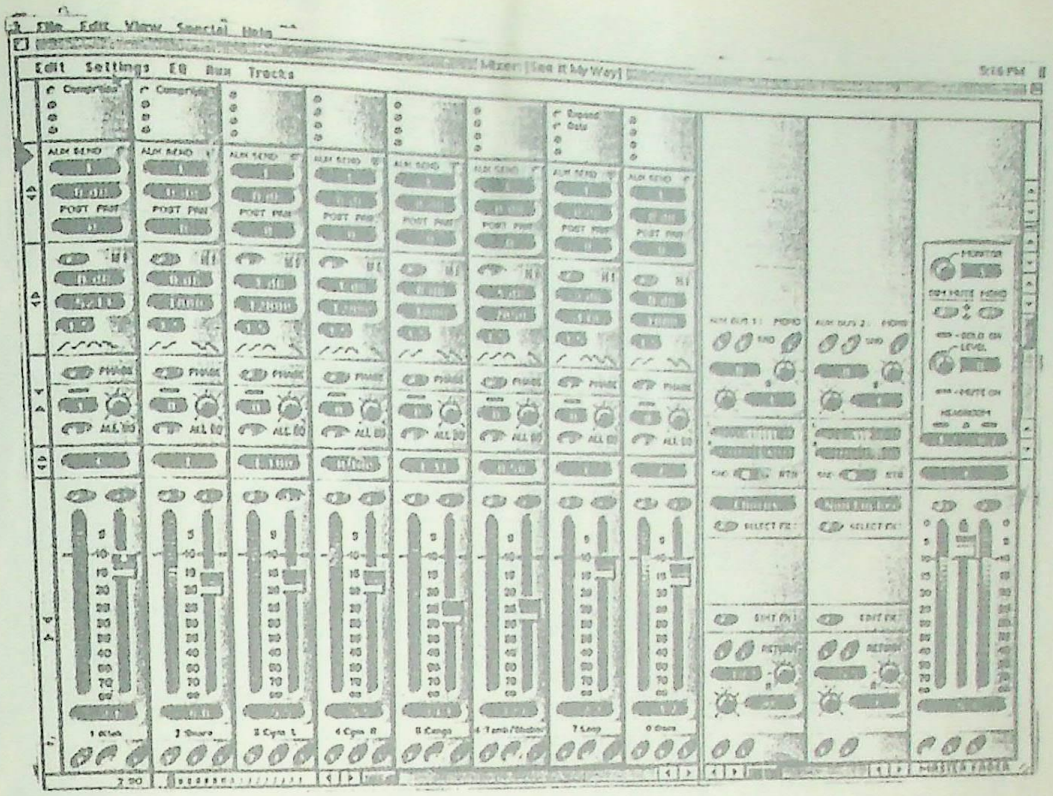

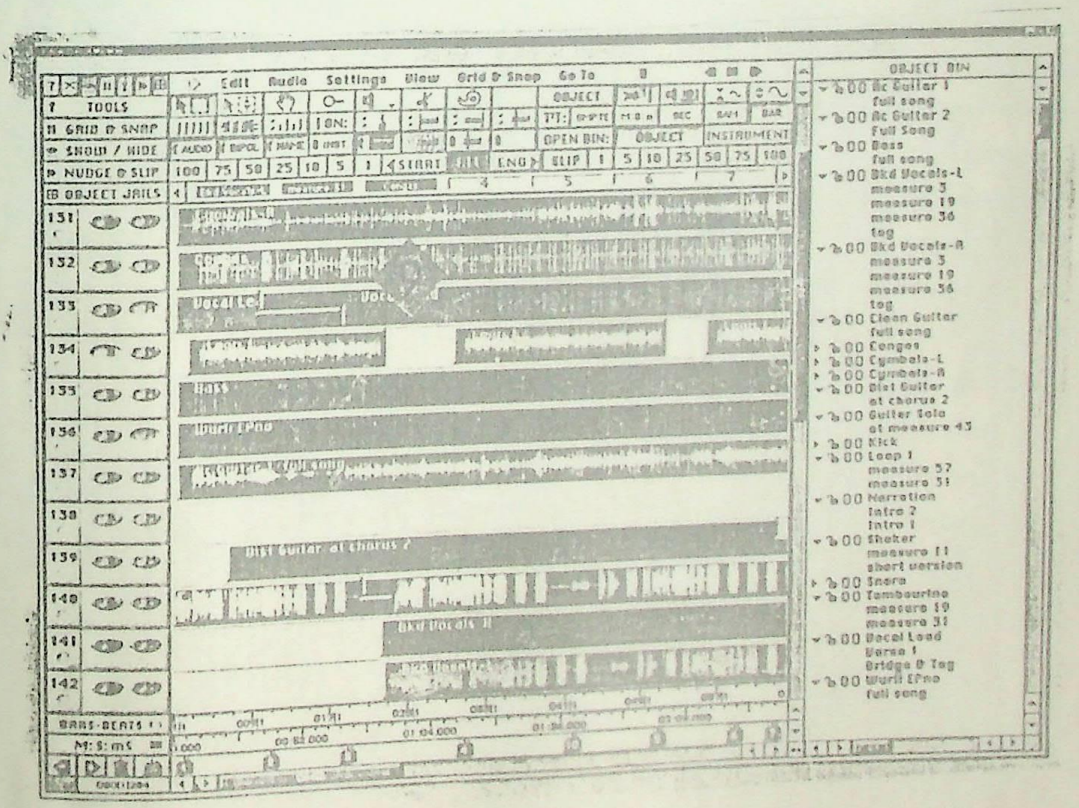

चित्र २०(ब)

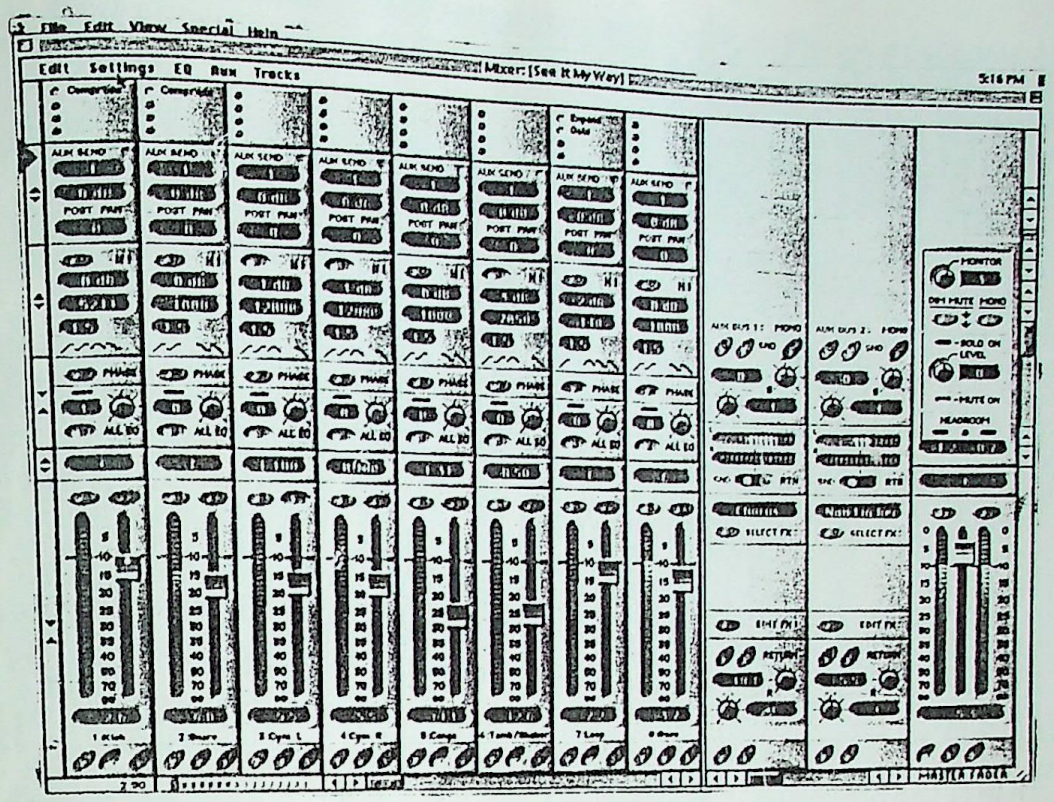

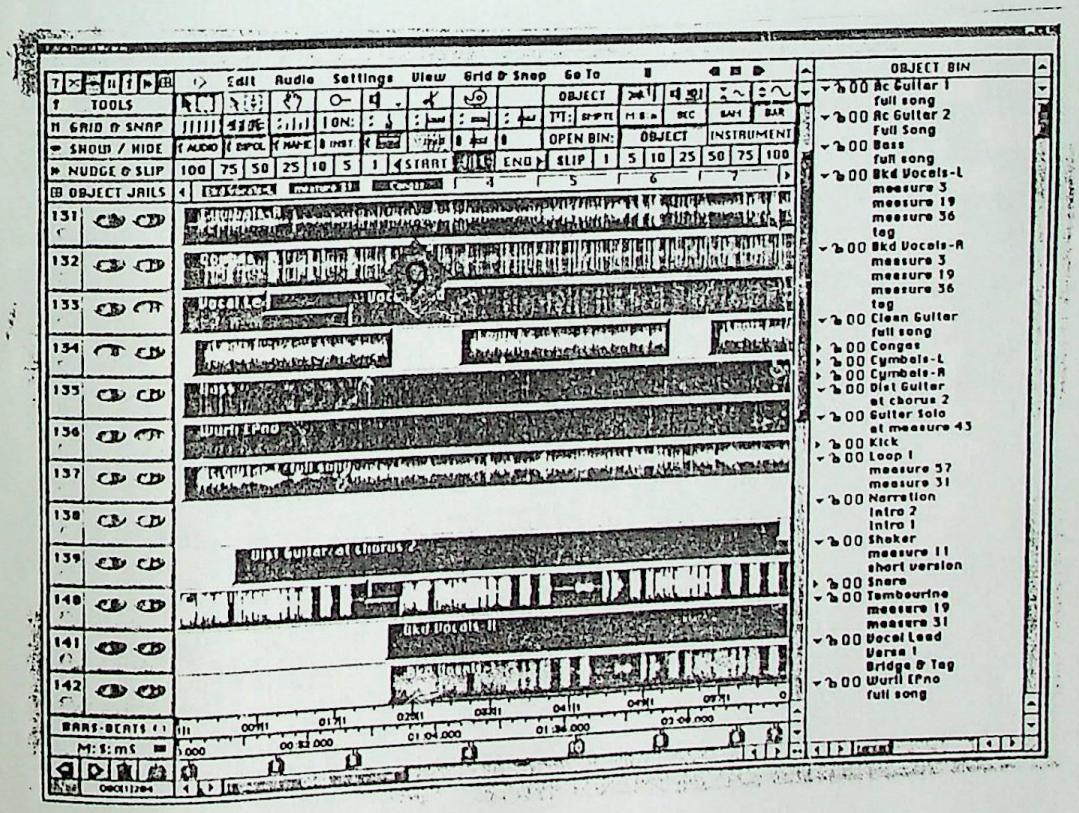

चित्र २०(क)

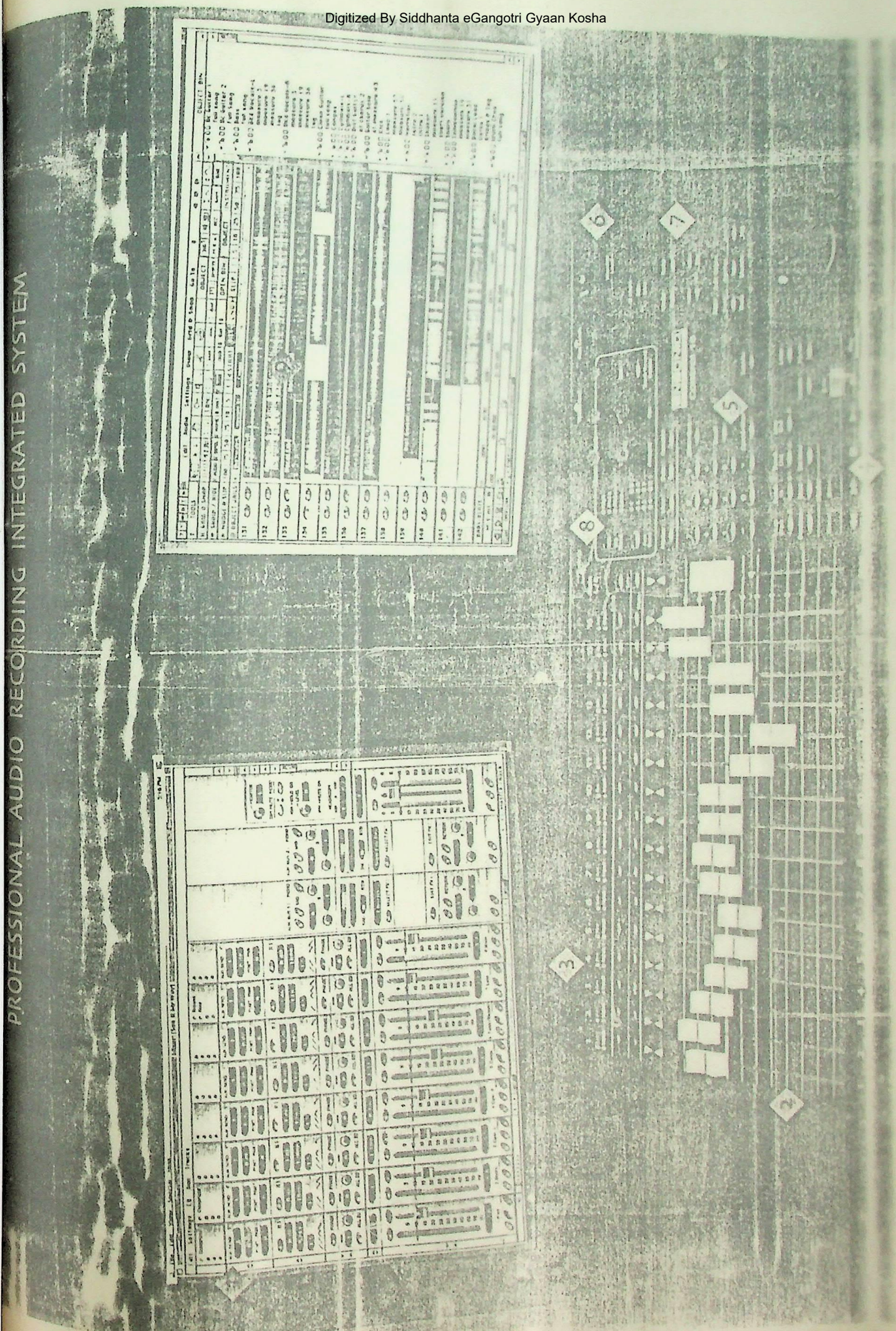

चित्र २०(स)

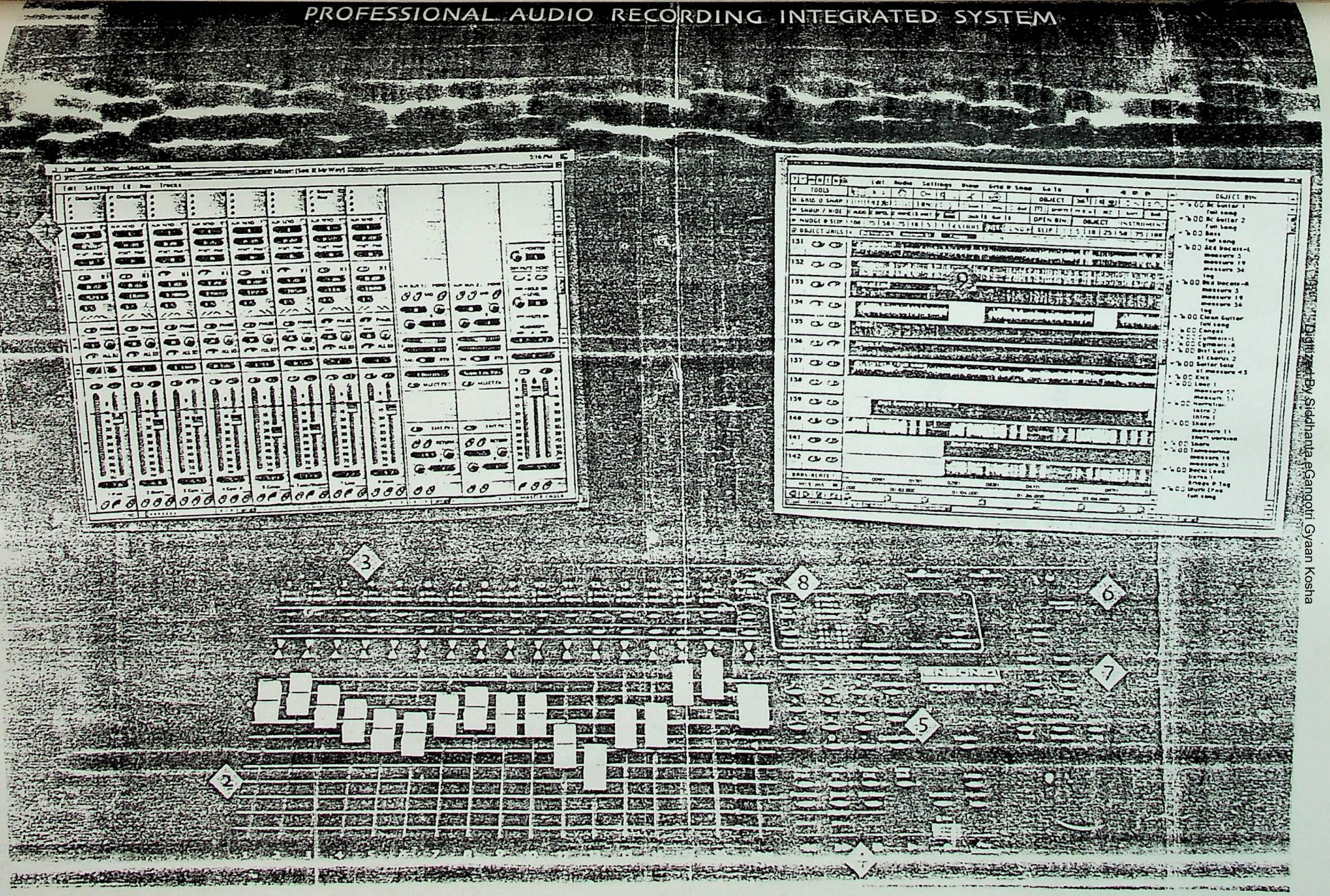

राग यमन–त्रिताल (16 मात्राये)

स्थायी

धा	तिं	तिं	ता	ता	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा
सा												मं			
नि	ध	–	प	मे	प	ग	मे	प	–	–	–	प	मे	ग	रे
स	दा	ऽ	शि	व	भ	ज	म	ना	ऽ	ऽ	ऽ	नि	स	दि	न
0				3				मे				2			
सा	रे	ग	रे	ग	मे	प	ध	प	मे	ग	रे	ग	रे	सां	सा
रि	धि	सि	धि	दा	ऽ	य	क	वि	न	त	स	हा	ऽ	य	क
0				3				x				2			
सा								सां							
नि	रे	ग	मे	प	ध	नि	सां	रें	सां	नि	ध	प	मे	ग	रे
ना	ऽ	ह	क	भ	ट	क	त	फि	र	त	अ	न	व	र	त
0				3				x				2			

अंतरा

ग								नि							
प	ग	प	धप	सां	–	सां	–	सां	रें	गं	रें	सां	नि	ध	प
शं	ऽ	क	र	भो	ऽ	ला	ऽ	पा	ऽ	र	ब	ती	र	म	ण
0				3				x				2			
सां															
गं	रें	सां	नि	ध	प	नि	ध	प	मे	ग	रे	ग	रे	सा	सा
सि	त	त	न	पं	ऽ	न	ग	भू	ऽ	ष	न	अ	नु	प	म
0				3				x				2			
नि								सां							
सा	रे	ग	मे	प	ध	नि	सां	रें	सां	नि	ध	प	मे	ग	मे
का	ऽ	हे	न	सु	मि	र	त	भ	ट	क	ट	तू	फि	र	त
0				3				x				2			

सां रें – तार सप्तक (ऊंचा)

सा नि़ ध़ मंद्र सप्तक (नीचा)

सा रे ग म प मध्य सप्तक (बीच का)

x - सम यानि पहली मात्रा

0 - खाली

2 - दूसरी ताली

3 - तीसरी ताली

राग शमन - त्रिताल (16 मात्रायें)

समय - $\frac{1}{10}$ सेकेण्ड

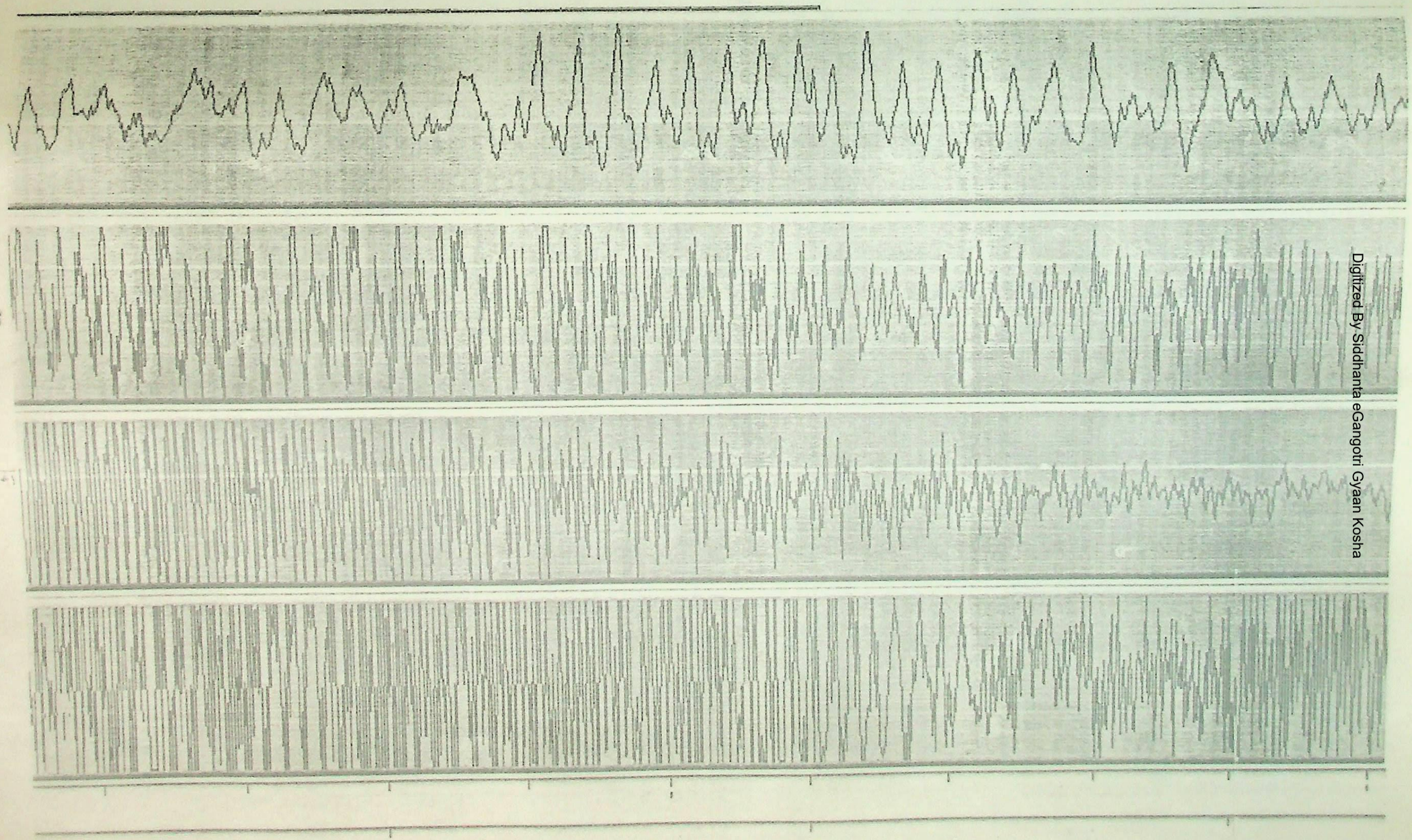

रात्रि समय - तिताल (16 मात्रायें)
समय - 1/10 सेकेण्ड

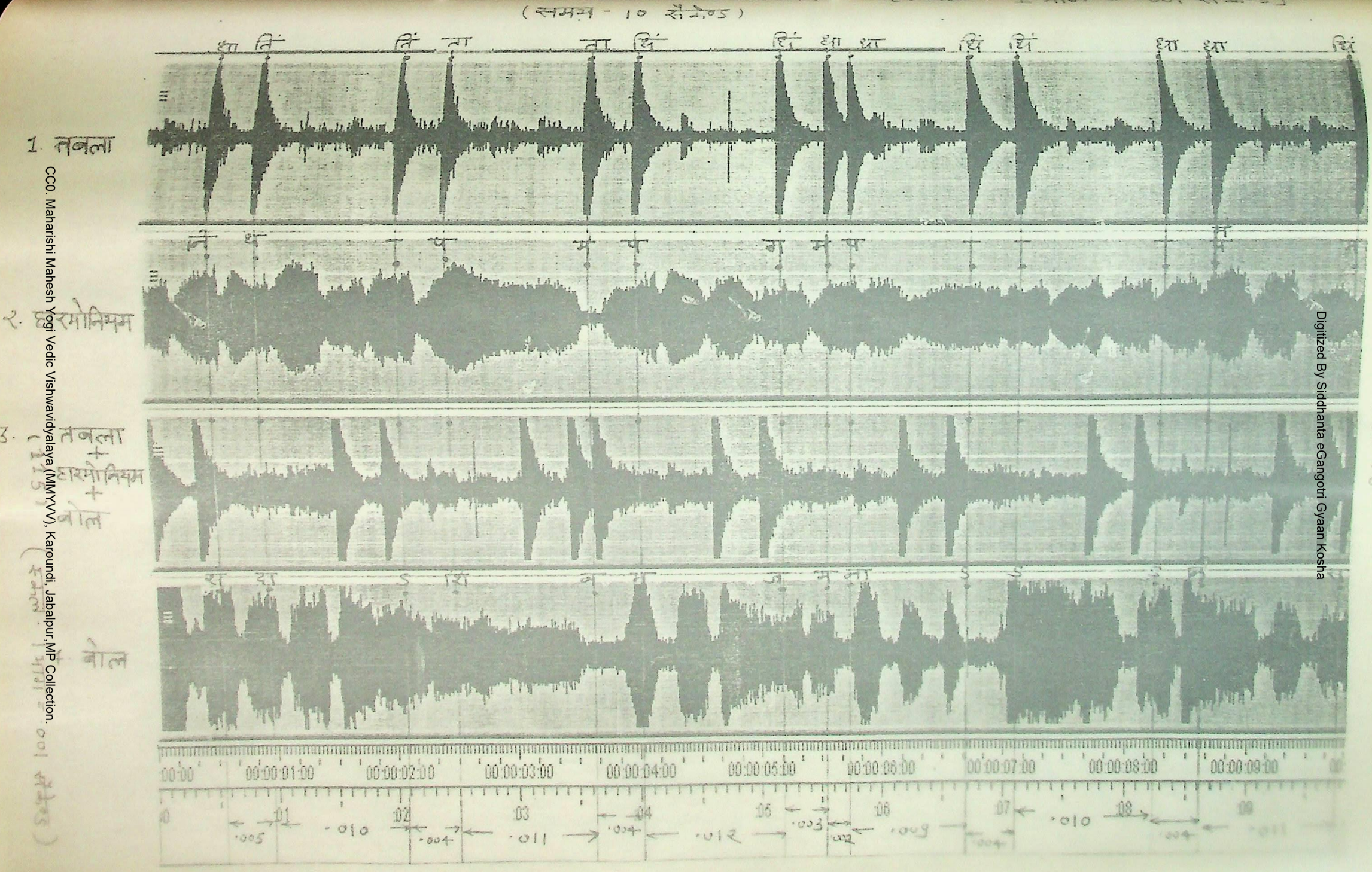

(समय - 10 सैकेण्ड)

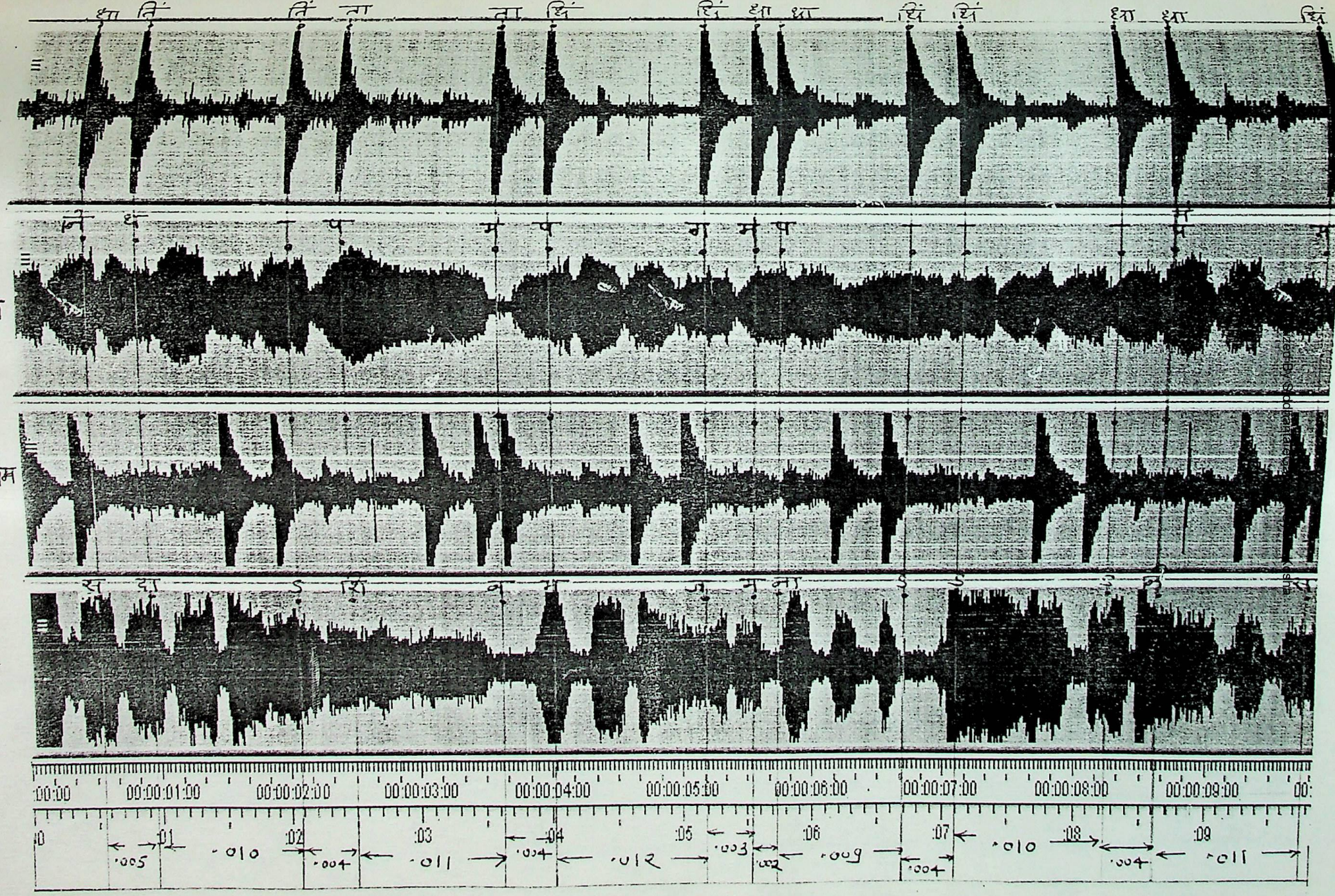

(115) (स्केल - 1 भाग = .001 सैकेण्ड)

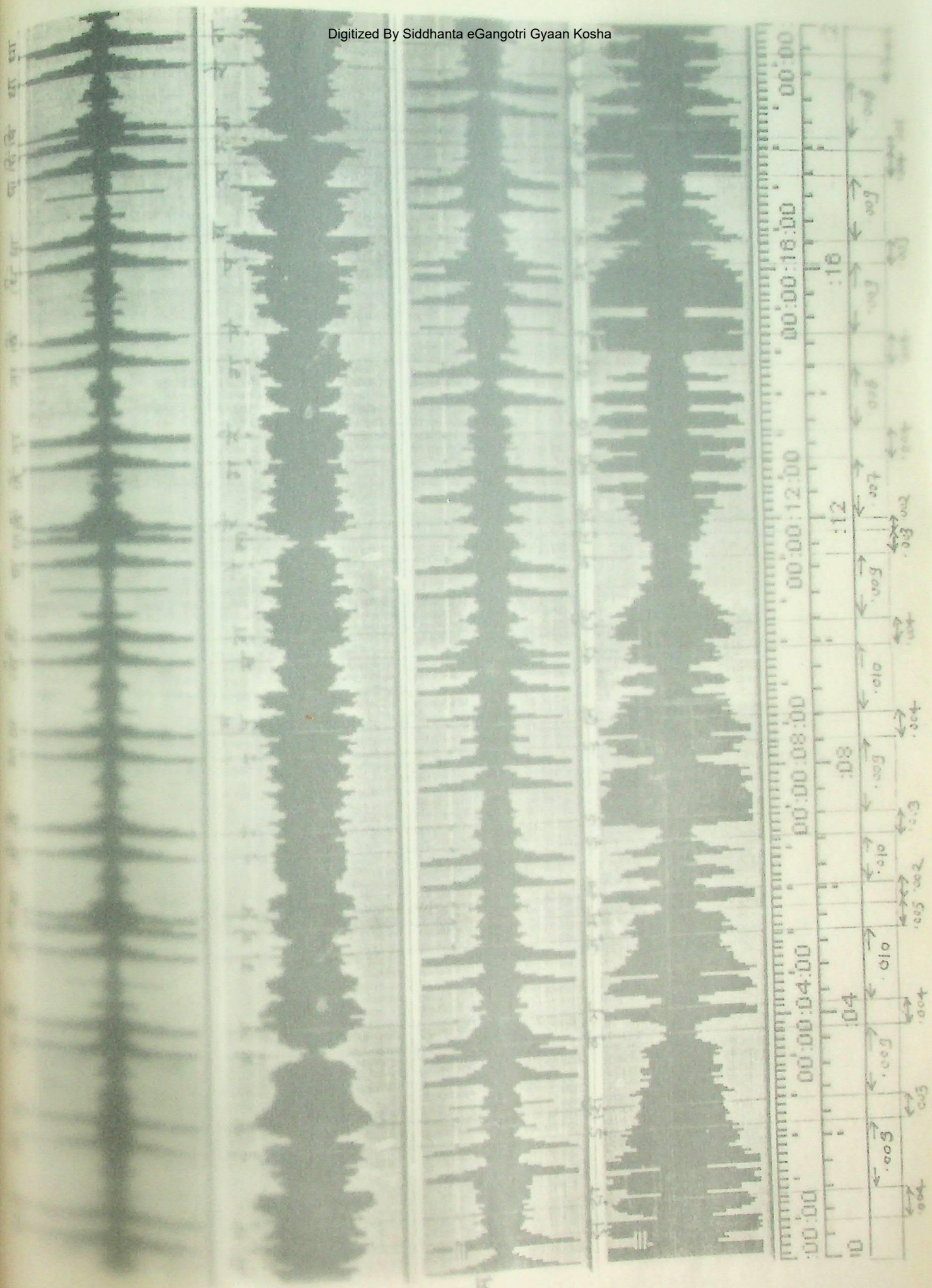

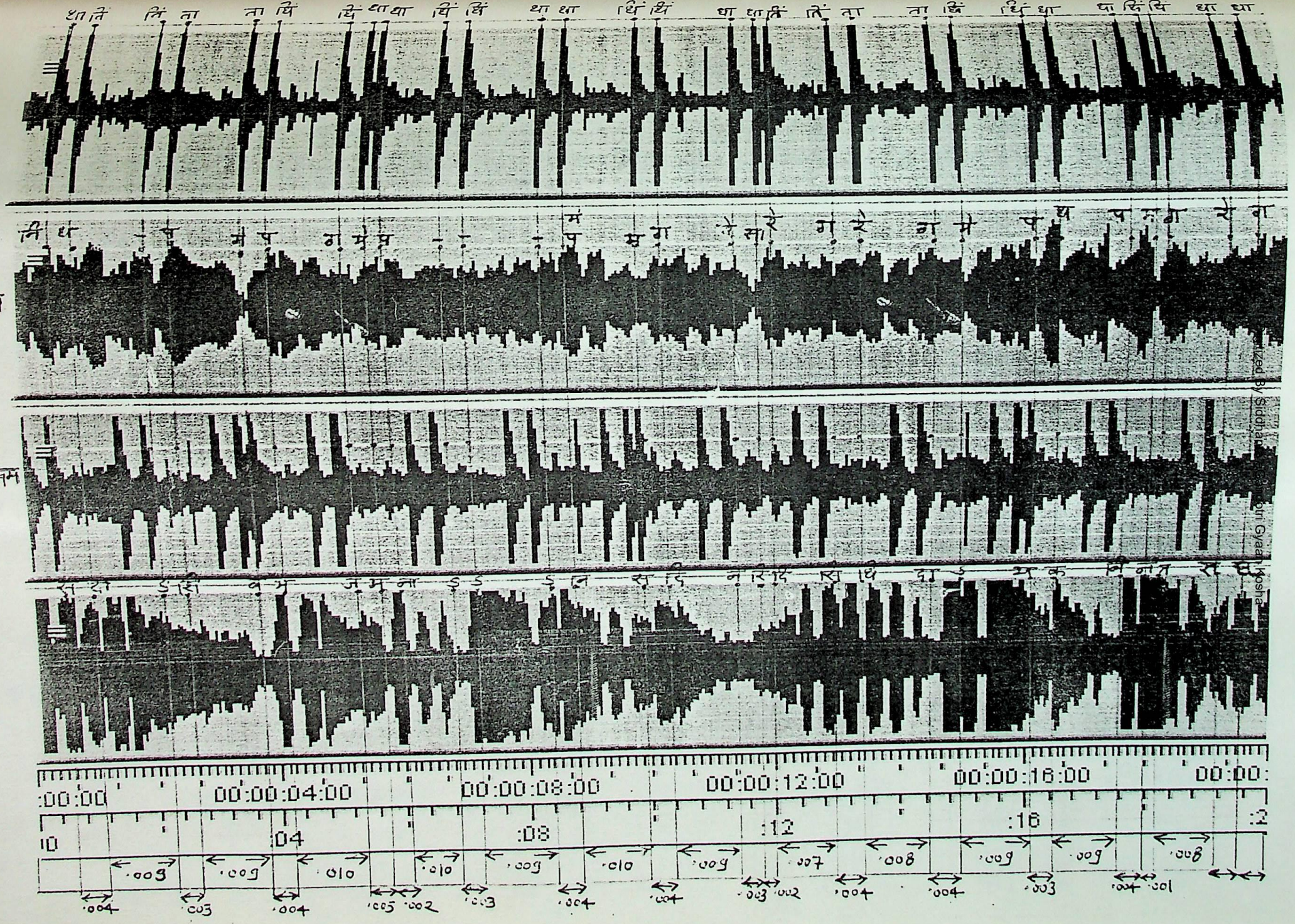

स्केल - 1 मात्रा = .001 सेकेण्ड

चित्र 24

समय - 30 सैकेण्ड
स्केल - 1 भाग = .001 सैकेण्ड

राग - भैरव - त्रिताल (16 मात्राये) (स्केल - 1 भाग = .001 सैकेण्ड)
(समय - 30 सैकेण्ड)

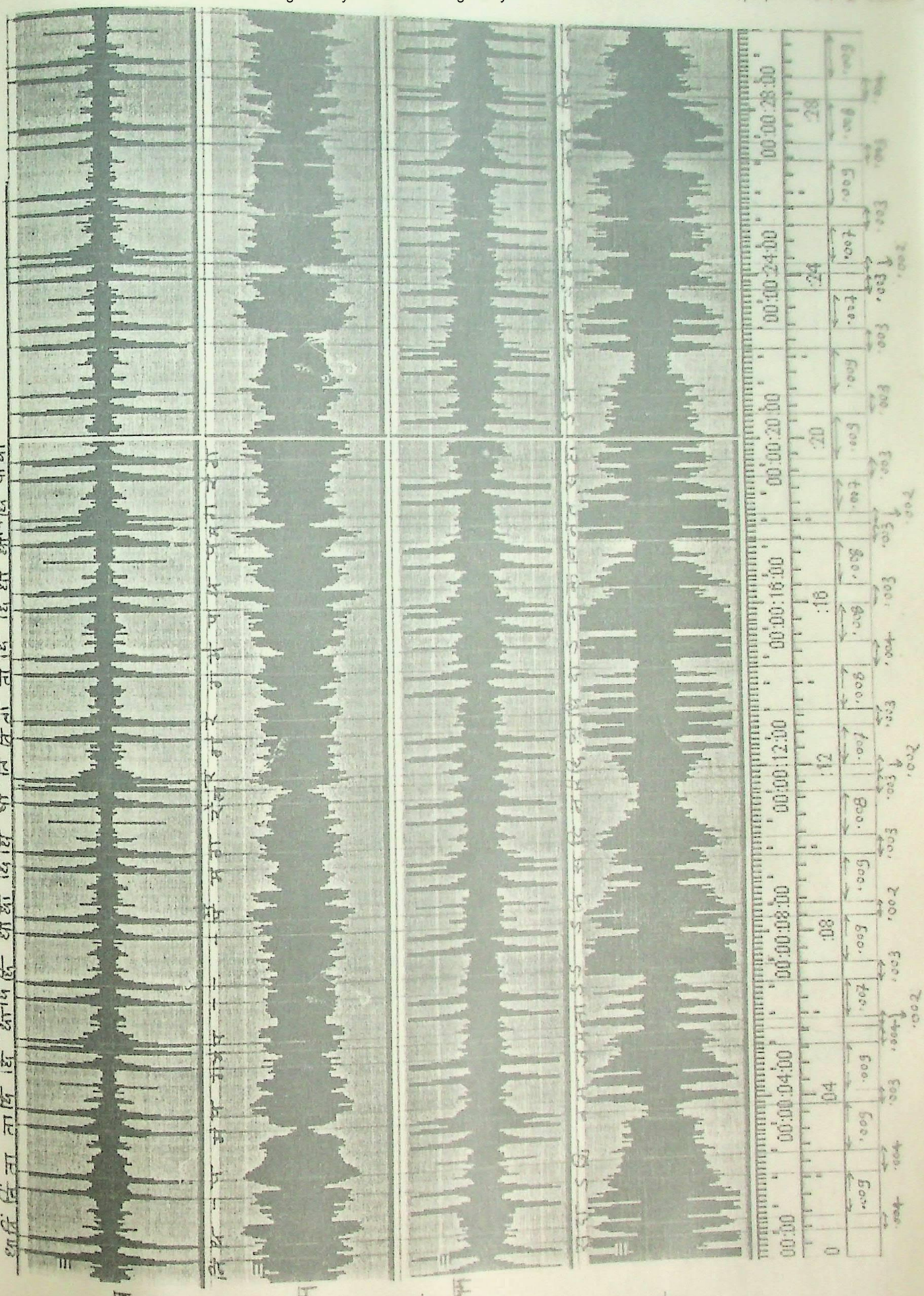

राग यमन - त्रिताल (16 मात्रामे) (स्केल - 1 भाग = ·001 सैकेण्ड)

(समम · 30 सैकेण्ड)

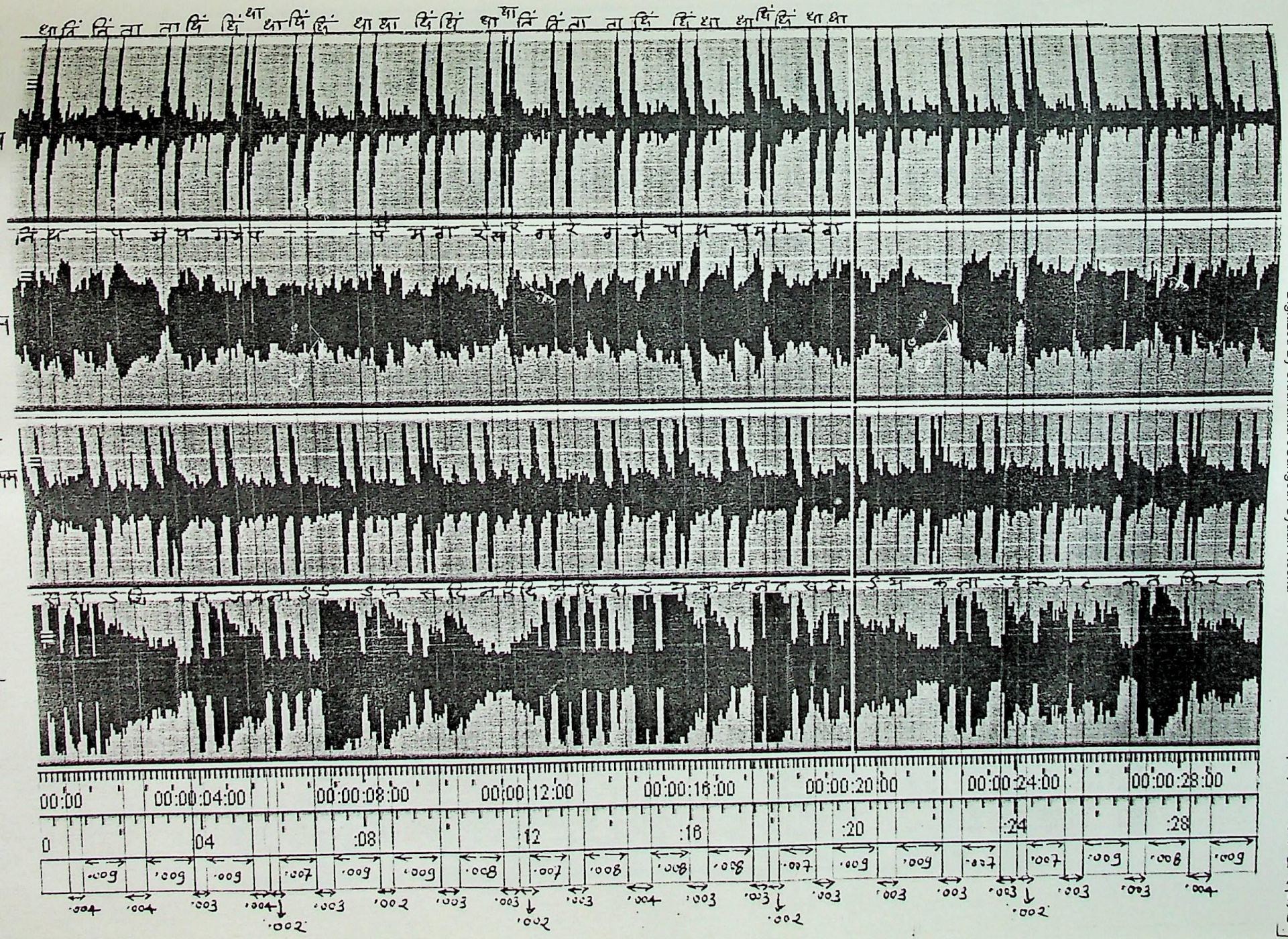

चित्र 34

1 समम · 30 सैकेण्ड

स्केल - 1 भाग = ·001 सैकेण्ड]

चित्र 25

Talk to me, computer

The research labs at AT&T have been developing a text-to-speech engine called Natural Voices. Paired with speech recognition software, the engine can turn a computer into a machine that listens and talks, with potential applications in corporate call centers and computers in cars.

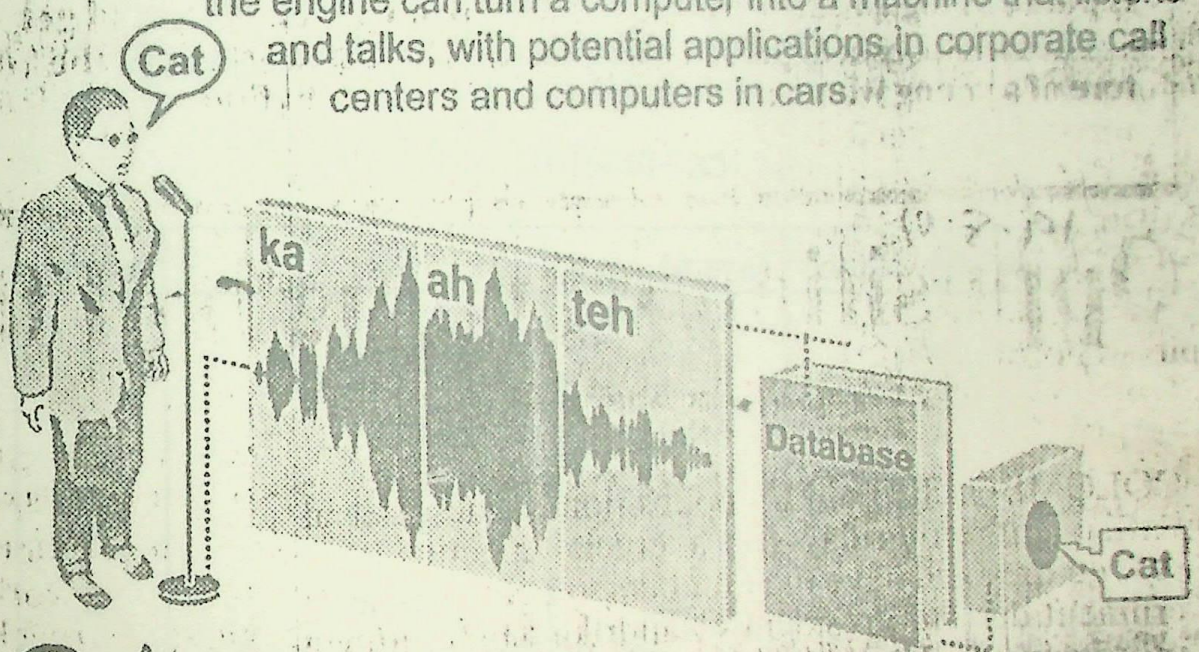

1. A computer digitizes a recorded voice, categorizing the frequencies of the words' phenomes — the simplest units of sound.

2. The computer analyzes the phenomes and, based on their ranges, links them to a database of words.

3. The computer transcribes spoken voice into text that it matches to the database. Recognizing keywords, it synthesizes and voices its own response.

AP

SOURCE: AT&T Labs

चित्र 25

Talk to me, computer

The research labs at AT&T have been developing a text-to-speech engine called Natural Voices. Paired with speech recognition software, the engine can turn a computer into a machine that listens and talks, with potential applications in corporate call centers and computers in cars.

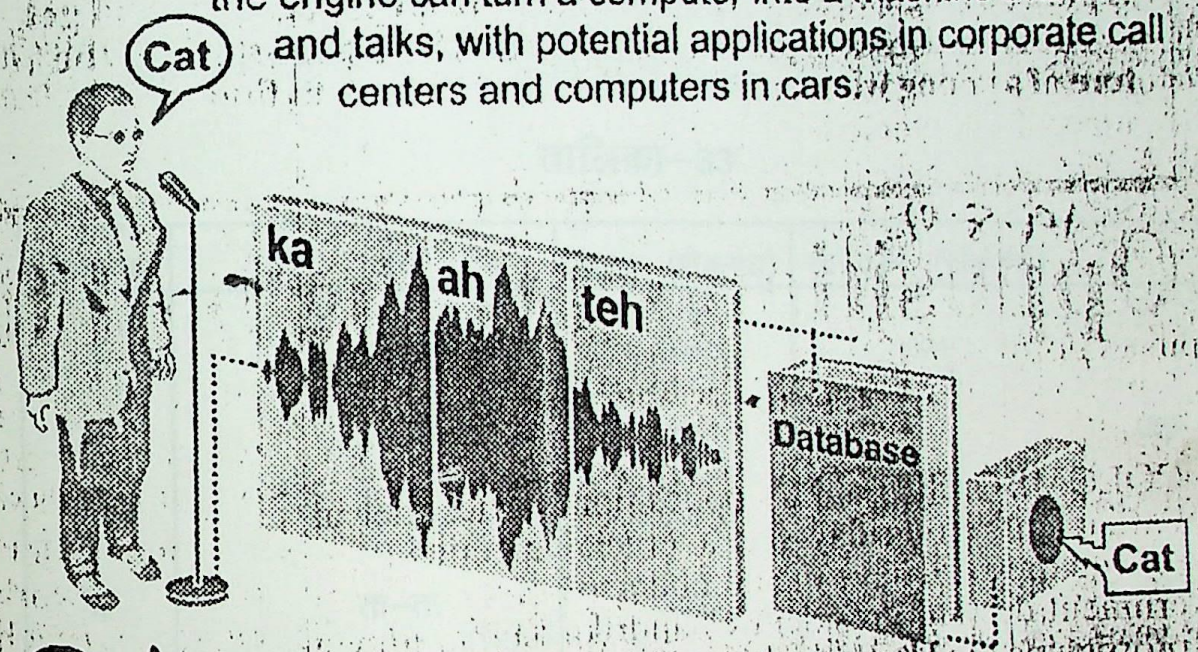

(1) A computer digitizes a recorded voice, categorizing the frequencies of the words' phenomes — the simplest units of sound.

(2) The computer analyzes the phenomes and, based on their ranges, links them to a database of words.

(3) The computer transcribes spoken voice into text that it matches to the database. Recognizing keywords, it synthesizes and voices its own response.

AP

SOURCE: AT&T Labs

1. ताल मे वर्ण मेरु के अनुसार काल संगम की तरंग लहरियों के संचय (Combination) खंड मेरू पर

2. स्वर आधारित स्पष्ट है; जिसकी लिपि के अनुसार लय की परख भी स्पष्ट है। विवरण का विश्लेषण प्रस्तुत है।

ताल के तरंग रूप का अध्ययन तथा निष्कर्ष :–

उपर्युक्त तरंग रूप में प्रत्येक ताल के बीच समय की गणना को किया गया है; जो निम्न है।

तालिका–33

क्रमांक	ताल	समय (सेकण्ड)	स्वरग्राम (सेकण्ड)
1.	धा–तिं	.004	.004
2.	तिं–तिं	.009	.009
3.	तिं–ता	.005	.005
4.	ता–ता	.009	.009
5.	ता–धिं	.004	.004
6.	धिं धिं	.010	.010
7.	धिं धा	.005	.005
8.	धा धा	.002	.002
9.	धा धिं	.010	.010
10.	धिं धिं	.003	.003
11.	धिं धा	.009	.009
12.	धा धा	.004	.004
13.	धा धिं	.010	.010

******

ताल :–

ताल काल गणना में जो समय लगा वह तालिका के दूसरे खण्ड में दिया गया है। यह ट्रेकिंग ताल के ग्राफ (चित्र 21, 22, 23 के ग्राफ क्रमांक 1) से स्पष्ट दिखाइ दे रहा है। जहाँ मात्र ताल की प्रक्रिया रिकार्ड की गई है। इस काल को स्वर ग्राम भी कहा जाता है।

इनमें से वह समय काल जो 0.004 से 0.005 तक है।

1. क्रमांक 1,3,5,7 तथा 12 में है; जिसकी औसत 0.0045 सकेंड है।
2. इसी प्रकार क्रमांक 8, तथा 10 की औसत 0.0025 सेकेण्ड है।
3. क्रमांक 2, 4, 6, 9, 11 तथा 13 में समय काल की औसत 0.0095

अतः इन तीन सारणी में प्रदर्शित विभाग का अनुपात है।

	0.0025	0.0045	0.0095
अर्थात्	25	45	95
या	5	9	19

चूंकि यह ट्रैकिंग ग्राफ गायन के एक अत्यधिक-छोटा है

इसलिये इस अनुपात को 4, 8, तथा 16 के लगभग मानना उचित होगा।

निष्कर्ष यह निकलता है कि यह वर्णमेरु की संवृत संख्या के तुल्य है तथा इसे संगीत की भाषा में

1/4 1/8 1/16 का काल समय मानना चाहिये।

जो कि वर्ण मेरू (चित्र–6) के अनुरूप है।

यह गणना पूरे गान का एक अंश ही है क्योंकि पूरे गाने का ट्रैकिंग कोई अनुदान न प्राप्त होने के कारण सीमित करना पड़ा।

वैसे भी यह अंश आगे बढ़ाने पर मात्र उसी क्रम का दुहराता ही होगा।

2. इस ट्रैकिंग में राग यमन का गान है; जिसके बोल के कुछ अंश ही शामिल हो सके हैं। जब गाना बजाना शुरू किया जाता है; तब पहले आलाप प्रक्रिया का उपयोग होता है। उसके पश्चात बोल से गाना शुरू होता है। इसी समय हारमोनियम लिपि के अनुसार वादक बजाता है; इसमे ताल का समावेश एक निश्चित स्थान जैसे धा–धा पर शुरू होता है।

ट्रैकिंग ग्राफ क्रमांक 2 में मात्र हारमोनियम की ध्वनि रिकार्ड की गई है। विभिन्न सरगम की आवृत्तियाँ लिपि के अनुसार चलती है किन्तु एक सुर की ध्वनि के विलोप होने के पूर्व ही दूसरी (सूर की) ध्वनि मार्गित होती हे। इस कारण ग्राफ में वे भी संग्रहीत हो जाती है।

यहाँ जो स्वर लिपि की रचना की गई है वह खण्ड मेरु के खण्डों के योग के अनुरूप है। ट्रेकिंग ग्राफ में स्वर को संभावित आवृत्ति दर्शाई गई है जो लिपि के अनुसार ही है। (देखिये चित्र 23 के ग्राफ में)

3. बोल ट्रैकिंग ग्राफ क्रमांक 4 में अलग से दी गई है। इस ग्राफ का स्पष्टीकरण AT&T Labs द्वारा चित्रित ग्राफ के समतुल्य समझा जा सकता है। (चित्र–25)

4. जब ताल, हारमोनियम तथा बोल से युक्त ट्रैकिंग की गई; जो चित्र 23 के ग्राफ क्रमांक 3 मे दी गई है।

इसमें स्वर की आवृत्तियाँ पर बोल के कारण भिन्नता को प्राप्त होती है किन्तु ताल स्थान वर्णमेरु के अनुरूप होते हुये यथा स्थान में ही है।

जब कभी इसकी कलाओं में कमी हो तब ट्रैकिंग में इसे कुछ काल मान को सरकाकर संयोग किया जाता है।

इस प्रकार सभी कलाओं का एकीकरण करके स्पष्ट गाने का स्वरूप प्राप्त किया जाता है।

इन सब परीक्षण का तात्पर्य यह है कि संगीत कला मात्र नहीं है; इसमें वैज्ञानिक आधार गणित भी आधारित है; जिसके मूल उपक्रम वर्णमेरु तथा खण्डमेरु प्रमुख हैं।

संगीत के विद्यार्थी को यह जानना चाहिये कि वह वैज्ञानिक तथ्य को कला के माध्यम से प्रस्तुत कर रहा है।

******

समीक्षा

इस शोध पत्र में ध्वनि के शास्त्रीय, वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक श्रोतों की समीक्षा करके यह दर्शाने का प्रयास किया गया है कि भारत वर्ष के वैदिक शास्त्र साहित्य के मूल में विज्ञान का आधार रहा है।

वैदिक कलाए, योग विद्या, धर्म आदि के आधार विज्ञान के द्वारा प्रमाणित है। महर्षि महेश योगी के भावातीत ध्यान योग में शांति की अवस्था को शून्य अवस्था (वेक्यूम स्टेज) से अमरिका के कई हजार शोध कर्ताओं ने प्रमाणित किया है। शून्य अवकाश में जबकि कोई कण नहीं होते हैं फिर भी स्पंदन तथा तरंग (छंद रूप) में सृष्टि तथा विनाश धन ऋण आदि सूक्ष्म कणों का निरंतर चलता रहता है।

ब्लेक होल अर्थात् कृष्ण विवर के इवेन्ट होराइजन में तथा ब्रह्माण्ड के अवकाश स्थानों में ऐसी प्रक्रिया चलती रहती है।

सार यह है कि ध्वनि छंद अथवा तरंग या रेडियो किरणों के रूप में सृष्टि में आज भी मौजूद है। यही तरंगों का सार्थक उपयोग मंत्रों के उच्चारण के द्वारा शास्त्रीय संगीत के विभिन्न रागों के द्वारा मन को शांति प्रदान करने में सक्षम है। ठीक उसी तरह जैसा भावतीत ध्यान योग के द्वारा सक्रियात्मक शांति मन को प्राप्त कर शरीर तथा विचारों को स्वस्थ्य रखा जाता है।

इस शोध में यह सिद्ध करने का प्रयास है कि स्वर, ताल, लय, अलंकार आदि से सुसज्जित मन मोहक कला एक मूलभूत गणीतीय सूत्र "वर्णमेरु" पर आधारित है। इसी सूत्र पर हमारे शरीर की कोशिकाओं डी. एन. ऐ. की संरचना आधारित है। छंद शास्त्र तथा कम्प्यूटर विज्ञान में इसी सूत्र के आधार पर कार्य करते हैं; यही कारण है कि भावातीत ध्यान योग द्वारा आत्मा से साक्षात्कार होता है।

सिन्थेसाईजर के माध्यम से यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध किया गया है; कि संगीत जो एक कला के रूप में परिगणित की जाती है; वह इसी "वर्णमेंरू" के सूत्र से घनिष्ट संबंध है।

ताल काल की गणना वर्ण मेरु के आधार पर ही की जाती है। स्वर की ऊर्जा में निहित खंड मेरु पर इसे व्यवस्थित किये जाते हैं। आधुनिक डिजिटल सिस्टम भी वर्ण मेरु में निहित है। यह मान्य है कि डिजिटल (वसुन्धरा) अंक प्रसार के द्वारा ताल लय स्वर आदि में स्पष्टतः प्राप्त होती है।

यह प्रदर्शित किया जा चुका है कि वर्णमेरु तीन गणितीय सूत्रों की एकता का स्वरूप है; जो आजकल उपयोग में आने वाले संगीत कम्प्यूटरीकृत सिन्थेसाईजर में उपलब्ध है।

इस शोध के परिणाम स्वरूप यह आवश्यक है कि शास्त्रीय संगीत पर तथा मंत्रों के उच्चारण में सूचारू सुधार करने की गुंजाईश है। वाद्य यंत्रों को सिन्क्रोनाईज करना और आसान किया जा सकता है। वैदिक श्लोकों में जा एक अनूठी विधाता की गरिमा है; उसे प्रखर रूप से प्रस्तुति के लिए एक माध्यम बनाया है। यही मानव के मानसिक विकास को स्वर्गीक अनुभूति कराता है। मानव अपने जीवन के रंग मंच पर आसानी से प्रभु की इच्छानुकूल किसी भी स्तर पर जीवन यापन कर सकता है।

******

//सन्दर्भ ग्रन्थ//

1. (a) The Glimpses of Vedic Unified Universal Computer System by Prof. M.K. Dave, Paper Submitted at D.D. University, Gorakhpur, India, on Scientific theames in vedic literature. Dec 2000.

   (b) Vedic Meru- A Step for Unification of knowledge by Prof M. K. Dave, Paper submitted at The World Sanskrit Conference, New Delhi. Apr. 2001.

   (c) अग्नि पुराण नारद पुराण शिक्षा निरूपण 4/4/45, अध्याय 335 पृष्ठ 566–570 (कल्याण वर्ष 45 संख्या 9, गीता प्रेस, गोरखपुर)

   (d) लीलावती वासना संहिता, दामोदर मिश्रा, मिथला इन्स्टीट्यूट ऑफ पी. जी. स्ट्डीज एण्ड रिसर्च इन संस्कृत लर्निंग दरबंगा विक्रम सवंत 2012.

2. (a) Table Man Yugas, Prof. M. K. Dave, "What awaits man in 2000 AD. & There After" Ajanta Publication D. K. Pub. Distributers, New Delhi, E-Mail : dkpd@del3.vsnl.net.in, Web Site : www.dkpd.india.com., Page -135-146.

   (b) L. Simon whiti field (Nature) (Nov. 1995)

   (c) Peter A. Underhill "Proceedings of the National Academy of Sciences".

   (d) Michael F. Hammer, Arizona.

3. (a) Arya Bhattiya, by Arya Bhatta Ed. by V. Sharma, K. Sharma, Indian National Science Academy, New Delhi. 1976.

4. गर्ग संहिता, अश्वमेध खण्ड, अध्याय 61, कल्याण अंक।

5. Ref 2 Chapter - 6, Page 172.

6. Ibid, Chapter- 6, P- 189- 190

7. (a) Ibid, Chapter- Page- 189-190.

(b) "20,000 year under the Sea" Patrice Burnot Reader's Digest, March 1993, Page - 78.

(c) A.C. Das Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute Pune, Vol. XXXIII 1952.

8. Bhagavad-Gita, A New Translation And Commentary with Sanskrit Text, By Mahrishi Mahesh Yogi, by Mahrishi International University Press Livingston Manor, New York.

9. (a) Tao of Physics-Fritz off capra Fortana/Collins - page 234.

(b) Modenrn Science & Vedic Science, Kenneth Chander, Susan Levin Dillbeck, Michaeal C. Dillbeck, Publication of Maharishi International University Fairfield Iowa.

10. कल्याण, संक्षिप्त नाद–विष्णुपुराणाङ्क (28 वर्ष का विशेषाङ्क) कल्याण–कार्यालय गीता प्रेस, गोरखपुर।

11. (a) "Times of India" (News Paper) Date - 5/12/89.

(b) नव भारत (समाचार पत्र) दिनांक 20/8/2000.

12. श्री हनुमान, कल्याण वर्ष 49 जनवरी 75, पेज–388 संगीत परिजात भादोकाल कालदर्शी।

13. A text book of sound, D.R. Khanna, R.S. Bedi, Atmaram & Sons, Delhi, Lucknow.

14. (a) ध्वनि – एन सुब्रमणियम् ब्रिजलाल, विकास पब्लिसिंग हाउस प्रा. लि.।

(b) ध्वनि तरंग एवं दोलन – डी. के. त्यागी, डी.सी. त्यागी जय प्रकाश नाथ एण्ड कं. मेरठ।

15. (a) नारद पुराण, शिक्षा निरूपण।

(b) संगीत विशारद, डॉ. लक्ष्मी नारायण गर्ग, संगीत कार्यालय हाथरस (उ.प्र.), Aug. 1994, Page - 178.

(c) वायु पुराणम् अध्याय 86, अनुवादक–रामप्रताप त्रिपाठी, शास्त्री हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

16. (a) भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान– डॉ. सुभद्रा चौधरी, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेंर संगीत शास्त्र विभाग, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (म.प्र.)

(b) भारतीय संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण, डॉ. स्वतन्त्र शर्मा।

17. (a) भारतीय संगीत का इतिहास – डॉ. शरदचन्द्र, श्रीधर परांजपे, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

18. (a) राग परिचय, प्रोफेसर हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, संगीत सदन प्रकाशन।

(b) संगीत चिन्तामणी – श्रीमती सुमित्री कुमारी, श्रीमती सुलोचना वृहस्पति, वृहस्पति पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

19. (a) Ref. 1,

(b) Structural Engineering.

20. Ref. 1(a)

21. Ref. 1(a)

22. (a) Ref. 1(d)

(b) Mathematics, NCERT- 1988. New Delhi- 110028.

V.B. Tiwari, V. Kahan, D.D. Joshi, B. Deokinandan., M. S. Rangachari, Izhar Hussain.

(c) संगीत रत्नागर।

(d) वाग बल्लभ।

(e) वृत्त रत्नागर– केदार भट्ट (अध्याय 6.2.3), लीलावती।

(c) वायु पुराणम् अध्याय 86, अनुवादक–रामप्रताप त्रिपाठी, शास्त्री हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

16. (a) भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान– डॉ. सुभद्रा चौधरी, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेंर संगीत शास्त्र विभाग, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (म.प्र.)

(b) भारतीय संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण, डॉ. स्वतन्त्र शर्मा।

17. (a) भारतीय संगीत का इतिहास – डॉ. शरदचन्द्र, श्रीधर परांजपे, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

18. (a) राग परिचय, प्रोफेसर हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, संगीत सदन प्रकाशन।

(b) संगीत चिन्तामणी – श्रीमती सुमित्री कुमारी, श्रीमती सुलोचना वृहस्पति, वृहस्पति पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

19. (a) Ref. 1,

(b) Structural Engineering.

20. Ref. 1(a)

21. Ref. 1(a)

22. (a) Ref. 1(d)

(b) Mathematics, NCERT- 1988. New Delhi- 110028.

V.B. Tiwari, V. Kahan, D.D. Joshi, B. Deokinandan., M. S. Rangachari, Izhar Hussain.

(c) संगीत रत्नागर।

(d) वाग बल्लभ।

(e) वृत्त रत्नागर– केदार भट्ट (अध्याय 6.2.3), लीलावती।

23. वासना संहिता – दामोदर मिश्रा, दरभंगा, विक्रम संवाद 2012.

24. (a) क.ट.प. यादि संख्या शास्त्र

(b) Electronic Devices and Circuits and Introduction, Allen Mottershead Chapter-25, page 448. Prentice-Hall of India Private Limited New Delhi-110001, 1988.

(c) Digital Computer - Fan Domatc

(d) पिङगलच्छन्दः सूत्रम्, हलायुद्य वृत्तिसहितं (वैदिकच्छन्दः प्रकरणान्तम्) चौखम्बा संस्कृत सीरीज आधिस, वाराणसी–1, चौखम्बा विद्याभवन, चौक, पो.बा. 69, वाराणसी–1 फोन : 3076

(e) छंद योग उपनिषद

(f) Digital Electronics - Malvino & Leatch

(g) डिजीटल इलेक्ट्रॉनिक्स और कम्प्यूटर साइंस, डॉ. एस. सी. सिन्हा, शिक्षा साहित्य प्रकाशन, 312313 चाहशोर, मेरठ 250002.

******